चिरं केशरीचन्द ने धर्म कथाओं में रुचि दिखाई है और मुझे धर्म अत्यन्त प्रिय है इस लिए स्वभावत: मेरा आशीर्वाद उसे प्राप्त है। यह युग धर्म विरोधी युग कहा जा सकता है और विशेषत: नवयुवकों में धर्म के प्रति अनास्था की वृद्धि हम जैसे लोगों के लिए चिन्ता का विषय है उस समय मेरे नवोदित पौत्र द्वारा धर्म के प्रति श्रद्धालु होना मुझे कितना आह्लाद कर है मेरे अंतरतम से निकले आशीर्वाद के इन दो शब्दों से उसका मूल्य आंका जा सकता है। जिनेश्वर देव उसे इस पथ में यशस्वी करें।

भैरोंदान सेठिया
३१ – ३ – १९५०

बीकानेर
वीर जयंती
वीर सं. [illegible]

समर्पण

जिनकी पुनीत छाया से मेरे जीवन का निर्माण
हुआ, जिनकी धर्म-भावनाओं से मेरा जीवन
अनुप्राणित है, उन पूज्य पितामह श्री
भैरोंदानजी सेठिया को उनके
संस्कारों का यह सुफल उन्हीं
को सादर समर्पित।

सूची

विषय

१ अभिग्रह
२ कला का रूप
३ भगवान की वाणी
४ परित्यक्त
५ अतिमुक्त
६ तपस्या: कसौटी पर
७ प्रतिबोध
८ मिलन
९ अमृतवर्षा
० पश्चात्ताप
१ मुक्तिके पथपर
२ अनुगमन
३ बाहुबली
४ प्रकाश किरण
५ न्याय
६ चांडाल श्रमण
७ धर्मकी रेखा
८ दंड
९ उद्बोधन
० सत्यव्रती
१ अनावरण

अपनी बात

आपको याद होगा कुछ समय पहले आपकी सेवामें 'अपरिचिता' नामक सामाजिक कहानीसंग्रह लेकर आया था। उसको पेश करते समय दिलमें एक तरहकी कशमकश थी। प्रथम प्रयास था न वह। वैसा होना स्वाभाविक भी था। आज वह बात नहीं है, तो भी एक नई चीज लेकर आया हूं। पाठक उसे अपनायेंगे तो प्रोत्साहन मिलेगा। वही तो मुझ जैसे लेखकोंका बल है और संबल भी।

यह संग्रह जैनधर्ममें आई कथाओंका आधार लेकर तैयार किया गया है। इनमेंसे कुछ कहानियां दैनिक और मासिक पत्र-पत्रिकाओंमें प्रकट हो चुकी हैं। कुछ हितेच्छुओं की यह इच्छा रही कि वे पुस्तक रूपमें निकले और उसीका यह नतीजा है। समयके साथ-साथ कहानियोंमें भी परिवर्तन होना स्वाभाविक था। जब-जब मैंने इन्हें पढ़ा, कुछ-न कुछ परिवर्तन होता ही गया। अतः मासिक पत्रिकाओंमें प्रगट कहानियों तथा इनमें कुछ परिवर्तन नजर आवे तो कोई आश्चर्य नहीं।

इन कथाओंका बीज शास्त्रोंमें है। इन्हींको पल्लवित करके प्रस्तुत रूप दिया गया है। इससे पाठकोंकी श्रद्धामें किसी तरहकी कमी न

पूर्वापर सम्बन्ध

बीकानेरके रईस सेठिया भैरोंदानजी हमारे विशेष परिचित और सविशेष स्नेही स्वजन हैं। लगभग आज बीस-पच्चीस बरससे हमारा और उनका स्नेह-सम्बन्ध चला आता है। वे एक बड़े व्यापारी हैं और हम शास्त्रके संशोधन, सम्पादन और अध्ययन-अध्यापनमें रस रखते हैं। सेठियाजी व्यापारी हैं, उपरान्त वे शास्त्रके स्वाध्यायी भी हैं इसी कारण हमारा और उनका स्नेह-सम्बन्ध निर्व्याजभावसे अविच्छिन्न रूपसे चला आता है।

थोड़े दिन पहले उनकी तरफसे पत्र आया कि हमारे पौत्र भाई केसरीचन्दजीने 'मुक्तिके पथपर' के नामसे थोड़ी कहानियां लिखी हैं, उसका उपोद्घात आपको लिखना होगा। सेठियाजीने यह भी लिखा कि आजकल नवयुवकोंमें धार्मिक संस्कार कम होते चले हैं, ऐसी स्थिति में खुद हमारे घरानेके हमारे पौत्र द्वारा ये धार्मिक कहानिया लिखी हुई देखकर मैं सविशेष प्रसन्न हूं। इसी कारण ही आपको उपोद्घात लिखनेका खास आग्रह करता हूं।

मेरे पास कहानियोंके फरमे सेठियाजीने भेज ही दिये। मैं कहानियां पढ़ गया। मेरी इच्छा हुई कि कहानियोंके लेखकका कुछ परि-

पूर्वापर सम्बन्ध

बीकानेरके रईस सेठिया भैरोंदानजी हमारे विशेष परिचित और अविशेष स्नेही स्वजन हैं। लगभग आज बीस-पच्चीस बरससे हमारा और उनका स्नेह-सम्बन्ध चला आता है। वे एक बड़े व्यापारी हैं और हम शास्त्रके संशोधन, सम्पादन और अध्ययन-अध्यापनमें रत रहते हैं। सेठियाजी व्यापारी हैं, उपरान्त वे शास्त्रके स्वाध्यायी भी हैं इसी कारण हमारा और उनका स्नेह-सम्बन्ध निर्व्याजभावसे अविच्छिन्न रूपसे चला आता है।

थोड़े दिन पहले उनकी तरफसे पत्र आया कि हमारे पौत्र भाई केशरीचन्दजीने 'मुक्तिके पथपर' के नामसे थोड़ी कहानियां लिखी हैं, उसका उपोद्घात आपको लिखना होगा। सेठियाजीने यह भी लिखा कि आजकल नवयुवकोंमें धार्मिक संस्कार कम होते चले हैं, ऐसी स्थिति में खुद हमारे घरानेके हमारे पौत्र द्वारा ये धार्मिक कहानियां लिखी हुई देखकर मैं सविशेष प्रसन्न हूं। इसी कारण ही आपको उपोद्घात लिखनेका खास आग्रह करता हूं।

मेरे पास कहानियोंके फरमे सेठियाजीने भेज ही दिये। मैं कहानियां पढ़ गया। मेरी इच्छा हुई कि कहानियोंके लेखकका कुछ परि-

मय पा सकूं और कहानियों के सम्बन्धमें उनसे बातचीत कर सकूं तो अच्छा हो। लेखकका उनके शब्दसे ही परिचय पाना चाहता था। वे उन दिनों अपनी पेढ़ीपर कलकत्ते जा चुके थे अतः मैंने सेठियाजीसे उनका पता मंगा कर चि॰ भाई केशरीचन्दजीको एक पत्र लिखा जिसमें मैंने लेखकके निजी सम्बन्धमें और कहानियोंके सम्बन्धमें थोड़े प्रश्न पूछे थे। उक्त पत्रमें मुझे उनके जीवन और विचारधारा का यथार्थ दर्शन हुआ।

बाबू प्रेमचन्दजीकी तथा श्री शरदबाबूकी कई कहानियां मैंने पढ़ी हैं तथा उन दोनोंके जीवनकी कथा भी मेरे पढ़नेमें आई है। प्रेमचन्दजी का तथा शरदबाबूका जीवन उनकी कहानियोंमें थोड़ा बहुत अमर प्रतिबिम्बित है। रामायणके रचयिता श्री तुलसीदासजीकी भक्तिमय भावना उनके रामायणमें पद-पदमें दिख पड़ती है। समराइच्चकहा (समरादित्य कथा) नामकी एक लम्बी कहानीमें उसके रचयिता आचार्य हरिभद्रका जीवन अद्भुत अप्रत्यक्षभाव पन्ने-पन्नेपर उतर गया है। लेखक और उसका मिलनेका विषय उन दोनों मे परस्पर बिम्ब प्रतिबिम्ब भाव हो तो उस कहानीका प्रभाव और उसके लेखक का लेख अवश्य प्रकारका होता है, अन्यथा कहानियां लेखक का मात्र एक प्रकारका व्यापार साधन है मानो दौलतकी चीज है उसका प्रयोजन केवल लेखकके मनोरंजनके सिवाय अन्य कुछ नहीं।

लेखकके पास जो सम्पत्ति और विचार सौन्दर्यकी पूंजी है वह विचार करणीय है। ऐसी पूंजी वर्तमानमें धनवानोंके लड़कोंमें बहुत कम देखनेमें आती है।

मैं समझता हूं कि लेखकके पितामहमें प्राचीन परम्पराके धर्म-संस्कार दृढ़मूल हैं, इसी कारण लेखककी प्रवृत्ति इन धार्मिक कहानियों को लिखनेकी हुई है। लेखकने कहानीका स्वभाव पुराना रखा है परन्तु उनकी वेश-भूषा एकदम नई बनाई है। इन कहानियां विशेष चमकदार बनी हैं।

रहस्य प्रकाश

"अभिग्रहकी" कहानीमें भगवान् महावीरके अभिग्रहकी बात है। ऐसे अभिग्रह मानसिक दृढ़ताके निशानरूप हैं। जिसको अपने मनको दृढ़ बनाना हो वह आजकलके नये प्रकारके अभिग्रह कर सकता है। महात्मा गांधीजीने यरवडा जेलमें हरिजनोंकी अलग सीटें दूर करनेके लिए इक्कीस उपवास किये थे उसके परिणाममें उस वक्तके प्रधान रामसेमेकडोनलने—रात ही रात पार्लमेंट बुलाई और अपना विधान बदलवा दिया। अभिग्रह करनेवाला स्वयं चारित्र सम्पन्न हो, सत्यशील हो, नम्र हो और सामाजिक श्रेयकी प्रवृत्तिमें अपने प्राणोंको भी न्योछावर कर देने तक तैयार हो। ऐसे महानुभाव अवश्य लोक-प्रिय होते हैं अतः उनके कठोर अभिग्रहसे प्रजामें जरूर जागृति आती है, राजका अन्यायी शासन डिग जाता है और परिणाममें अभिग्रह करनेवालोंका प्रभाव सब पर होता है। जिससे श्रेय ही श्रेय होता है।

जैन समाजके अग्रज साधु या गृहस्थ जो ऐसे अद्भुत पवित्र चरित्र-सम्पन्न हों, सत्यनिष्ठ हों, नम्रतम हों, वे समाजके हितके लिए अपने प्राणोंतककी बलि चढ़ानेकी निस्पृह भावसे तत्पर होकर किसी प्रकारका दृढ़ संकल्पके साथ प्रदर्शन करें तो समाजमें [illegible] और

न्यायनीतिकी प्रतिष्ठा अवश्य हो सकती है अन्यथा, काले बाजारवालोंके साथ जहांतक उनका सहकार है, वहांतक धर्माचरण संभव ही नहीं। खाली वेश पहिरनेसे या थोड़ा बहुत कर्मकाण्ड करनेसे जीवन विकास या समाजका श्रेय करना नितांत असम्भव। हमारे समाजमें साधु या गृहस्थ कई तपस्या करते हैं परन्तु उसका परिणाम प्रायः निज पर भी सिवाय देहशोषण और प्रतिष्ठा लाभके अन्य होता नहीं दिखता तो समाज पर तो क्या होवे ?

सामाजिक श्रेयकी चाह जो रखते हैं उनको भगवान् महावीरके अभिग्रहका अनुसरण सत्य निष्ठाके साथ करना चाहिए। यह भाव अभिग्रहकी कहानीका है।

'कलाका रूप' कहानीमें "शास्त्राद् विपरीताद् राजधाद भवन्ति" इस न्यायसे विपरीत बने हुए कलाकारने देखना भारी अनर्थ कर डाला। राजा चण्डप्रद्योत और राजा शतानीकके बीच बड़ा विग्रह खड़ा करवा कर कौशाम्बीके राज्यका सर्वनाश कर डाला। राजा लोग भी कैसे लम्पट होते हैं उसका चित्रण भी कथामें ठीक हुआ है।

रानी मृगावतीकी जांघ परके तिलको दिव्य करामात न मानली हो तो ऐसा कह सकते हैं कि रानीने जो घाघरा पहिरा था और जो उसके ऊपर साड़ी पहिरी थी वे दोनों पारदर्शक कांचकी तरह इतने पतले थे जिससे चित्रकारकी दृष्टिमें तिल आना सुसंभव है।

शतानीकने चित्रकारको जो दण्ड दिया वह उसकी अविमृश्यकारिता ही है। कलाका दुरुपयोग न करना और कलाकारका अनादर न करना यही रहस्य [illegible] का प्राणभूत है।

भगवान्‌की वाणीमें गजसुकुमालकी आत्म-निष्ठा, दृढ़-प्रतिज्ञा और समभाव, क्षममें रसके सदृश अणु-अणु भरे हुए हैं।

क्षत्रियको ब्राह्मण अपनी कन्या यहीं खुशीसे देता था, यह बात भी कथासे प्रतीत होती है। अब ऐसा कम दिखता, क्या कलिकाल है ?

"परित्यक्ताकी" कहानीमें नलका धैर्य सराहा जाय या दमयंतीका, यह एक प्रश्न है। हमारी नजरमें दोनों बड़े धीर और सच्चे प्रेमी थे, आदर्श रूप थे। यह कथा महाभारतसे भी पुरानी मालूम होती है। जब पांडवोंको दुःख पड़ता है तब पुराने राजा महाराजा भी विपित्तमें किस प्रकार संकट झेलते थे और अपना जीवन बड़े संयम व सहन-शक्तिके साथ बीताते थे, ऐसा कहनेके लिए महाभारतकार नलके चरित्रको कहता है।

"अतिमुक्तक" मनगारने बालक होनेसे अपनी तूंबेको पानी भरे नालेमें छोड़ कर खेलवाड करना शुरू कर दिया। इसका तात्पर्य और कुछ भी हो परन्तु बालककी अवहेलना करनेवाले स्थविरोंको भगवान्‌ने जो उपालभ दिये हैं, उनको आजकल बालकोंको या चेलोंको अपमानित करनेवाले और मारनेवाले हमारे गृहस्थ और साधु समझ जाय तो भगवान्‌के उपालभ सफल बन सकें। बाकी लेखकने लिखा है कि "ज्ञानकी उपलब्धि किसी एक ही प्रकाश किरणमें संभव हो सकती है।'

'तपस्या कसौटी' परकी कहानी चित्रशास्त्रका स्पष्ट रूपमें समझाती है। यद्यपि इस कहानीके नायक जैन नायक [illegible] [illegible] हैं और [illegible] नायक [illegible] 'चन्दन [illegible]' [illegible] [illegible] इसी प्रकार [illegible] [illegible] दूर [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

असत्य है यह भी कहानीकारने दूसरे नायकमें बता दिया है।

"प्रतिबोध" की कहानी आजकल धनके लिए, स्त्रीके लिए या जमीनके लिए लड़नेवाले दो सगे भाइयोंको अनुकरण रूप है और अभिमानके साथका सदाचार शून्यवत् निकम्मा है तथा नम्रताके साथका सदाचार अंकोंपर लगी हुई शून्यकी समान महामूल्यवान है यह भी बात कहानी बताती है।

"मिलन" की कहानीमें पुरुषकी अविचारिता तथा सरलता मालूम होती है और स्त्रीकी सहनशीलता व सतीत्व चमक उठता है। स्त्री और पुरुषके सम्बन्धमें आज भी जो अनबन हो जाती है उसका कारण ही होता है। जब पुरुष व स्त्री होशमें आते हैं तब मामला तय होकर सुधर जाता है।

"अमृतवर्षा" कहानीमें भगवान् महावीरकी दृष्टिमें कितना अमृत भरा है और कितनी मानव वत्सलता तथा धीरता भरी है यह अच्छे से अच्छे शब्दोंमें चित्रित की है। ऐसे महावीरोंके लिए प्रचण्ड क्रोध पर जय पाना एक दम आसान है जो हमारे लिए बड़ा कठोर मालूम होता है।

'पद्मलाभ' की कथामें पहाड़की गुफामें रहनेवालोंको भी काम किस प्रकार सताता है और [illegible] पत्थरकी तरह सपाट [illegible] करने वाला देविता भी [illegible] [illegible] समझाने [illegible] और [illegible]

[illegible] मानव

अन्तमें एक बात कहकर पूरा करूँगा कि लेखककी कल्पनामें सचाईसे जीना शक्य नहीं। इस बातको लेखक अपने धनार्जनके व अन्य प्रवृत्तिके सच्चे प्रकारके प्रयत्नसे गलत साबित कर और इसके लिए उनको तटस्थताका त्याग करना पड़े तो उसे भी वे त्याग देवें।

शिव मस्तु सर्व जगतः

अहमदाबाद
भाद्र शुक्ला ५ सं० २००६

—बेचरदास दोषी

मुक्ति के पथ पर

१४.

अभिग्रह

उसके के उपरान्त भगवान् महावीर को घूमते हुए महीनों बीत गये पर उनकी प्रतिज्ञा पूर्ण न हुई। जहां जहां जाते हैं नई नई तरह तरह की भावनाएं सामने आती हैं। प्रभु देखते हैं मुस्कराते हैं और चल देते हैं। भगवान तो और ही कुछ चाहते हैं। उन्होंने तो कुछ और ही ठानी है। राजकन्या हो, सदाचारिणी हो, और हो निरपराधिनी पर फिर भी जिसके सुकुमार पैरों में पायल की जगह बेड़ियां तथा सुन्दर हाथों में चूड़ियों के स्थान में हथकड़ियां पड़ी हुई हों। सुन्दर घुंघराले रेशम से कोमल बालों के स्थान पर जिसका सिर मुंडा हुआ हो, शरीर पर कालिख लगी हुई हो, तीन दिन का उपवास किए हो, उपवास भंग करने के लिए उड़द के बाकले सूप में लिए हो। न घर के अन्दर हो, न बाहर हो। एक पैर देहली के भीतर हो तथा दूसरा बाहर हो। दान देने के लिए भगवान् जैसे महान् अतिथि की प्रतीक्षा कर रही हो। प्रसन्न मुख पर नयनों में आंसू हों। करुणा और हास्य का अपूर्व सामञ्जस्य चाहते थे वीर प्रभु। यह अनहोनी और विचित्र भा[illegible] बात

है यह कथ[illegible] [illegible] और [illegible] नहीं नहीं यह [illegible]

झोंपड़े को देखकर तुमने मुंह मोड़ लिया ? नाथ, कृपासिन्धु, ऐसा न करो। ऐसे निष्ठुर इतने निर्मम न बनो। जो कुछ भी है मुझ हतभागिनी का आतिथ्य स्वीकार करो कहते कहते हठात अबला की बड़ी बड़ी आंखों से मोती जैसे दो बूंद आंसू टपक पड़े। उसके प्रसन्न मुख पर निराशा की एक गहरी रेखा खिंच गई। बेचारी राजकन्या चन्दनबाला ! क्या क्या न देखा था अपने छोटे से जीवन में उसने।

प्रभु और अधिक आगे न बढ़ सके। बढ़ते कैसे ? करुणासागर के लिए दो बूंद आंसू कम न थे। उनका कोमल हृदय दया से द्रवित हो उठा। अबला के समक्ष भिक्षा के लिए अपने दोनों हाथ फैला दिये उन्होंने। कितना सुन्दर, सुखद और अद्भुत था वह दृश्य। समस्त वसुन्धरा जगमगा उठी। चारों ओर आनन्द का सुखद वातावरण छा गया। भगवान् का अपूर्व अभिग्रह आज पूर्ण हो गया, यही चर्चा आज कौशाम्बी के घर घर में हो रही थी। इसका सारा श्रेय सती चन्दनबाला को था। वही निरपराधिनी बंदिनी, राजकुमारी किन्तु दुखिया अबला चदनबाला जिसके समक्ष त्रिलोकीनाथ ने स्वयं अपने दोनों हाथ फैलाए थे।

× × × ×

सुनना चाहते हो उस अबला का क्या हुआ ?

सुनो,-अबला नाच उठी। तुमने देखा होगा, नर्तकियां नृत्य करती हैं, घुंघरू बांध बांधकर, पर उसे उनकी आवश्यकता न थी। उसे किसी साज सज्जा की जरूरत न थी। वह नाची और

इतनी तल्लीनता से नाची कि वह उन्मादिनी अपनी सारी सुध-बुध खो बैठी। इस आत्मविस्मृति में भी आनन्द था, आत्मशान्ति थी। उसका रोम रोम पुलकित हो उठा। वहां का सारा वातावरण उस आत्मविभोर नृत्य से गूँज उठा। ऐसा नृत्य ऐसी तल्लीन पदध्वनि, ऐसा मादक वातावरण बहुत दिनों से दुनियां ने देखा न था!

× × × ×

कहते हैं, भद्रा ने पुरस्कार चाहा अपने वीर प्रभु से।

प्रभु ने उत्तर में कहा बताते हैं—परम धर्म अहिंसा का प्रचार करो। यही तुम्हारा पुरस्कार है देवि।

जरा सोचो तो, कैसा अद्भुत पुरस्कार था वह। उस वीर की पहली शिष्या ने साध्वी-संघ की अधिष्ठात्री बन कर उस अमर संदेश को घर घर पहुँचाया थी, जिसकी सुमधुर लोकहितकारी ध्वनि आज भी भारत के कोने कोने से गुंजरित हो रही है। समय का प्रत्येक क्षण आज भी उस महान संदेश से आलोकित हो रहा है, और होता रहेगा, जब तक मानव मानवता के मूल मंत्र अहिंसा को पुकारते रहेंगे

★

दो

कला का रूप

आखिर चित्रकार ही तो ठहरा। कौशाम्बी की सर्वांग सुन्दरी
हारानी मृगावती के प्रतिबिंब की एक झलक भर देख पायी
क चित्र बनाकर तैयार कर दिया। अचानक चित्र की जांघ पर
क बूंद मसि ने गिर कर कलाकार के कार्य को और ही रूप
दिया। उसे छुड़ाना या पोंछना चित्र के सौंदर्य को अछूता
रहने देता अत चित्रकार ने मन ही मन कहा—चलो रहने भी
। सुन्दरी की जांघ पर एक तिल भी तो होना चाहिए।
लाकार ने उस मसिबिन्दु का स्वागत किया। अपने चित्र में
से जहां का तहां रहने दिया।

कौशाम्बी नरेश ने चित्रकार की कला का निरीक्षण किया,
ोले "चित्र तो सुन्दर है" और अचानक उनकी दृष्टि पड़ गई
स जांघ पर के तिल पर। महाराज ने सोचा, विचारा। संशय
और संदेह ने उनके विचारों को धेर लिया। अनेक यत्न
करने पर भी वे उनसे मुक्ति न पा सके। महारानी और चित्र-
कार [illegible] उनके हृदय में घुल रहे [illegible] के प्रभाव से बच
न सके।

[illegible] चित्रकार की ओर देखा। उनके हृदय
[illegible] इस तरह उसने निर्विकार

शुरू किया। उसकी अनवरत भावना सफल हुई। उसने रानी मृगावती का एक दूसरा चित्र बनाया उससे भी अधिक सुन्दर, कलापूर्ण और महाराज शतानीक के प्रतिद्वन्दी महाराज चंडप्रद्योतन को लेजाकर भेंट किया।

"यह चित्र काल्पनिक है या वास्तविक ?—" उत्सुक राजा ने अत्यन्त उत्साह के साथ पूछा।

मुसकराते हुए चित्रकार ने कहा—काल्पनिक नहीं है महाराज। यह है सर्व सुन्दरी कौशाम्बी की पटरानी मृगावती का चित्र। केवल चित्र। वह भी बाएं हाथ से बनाया हुआ। अब आप निर्णय कर सकते हैं कि वास्तविक और काल्पनिक में कितना अन्तर होता है।

फिर क्या था, दूत भेजा गया। अपने दुश्मन कौशाम्बी के राजा शतानीक के पास सुन्दरी मृगावती की मंगनी के लिए।

दूत को उत्तर मिला—अपने मूर्ख राजा से कह देना, हमेशा कन्या की मंगनी होती है विवाहिता स्त्री की नहीं, और उससे यह भी कहना न भूलना कि वह किसी आश्रम में जाकर राजनीति और उससे पहले धर्मनीति का अध्ययन करे। समझे—जाओ।

फलतः चण्डप्रद्योतन ने अपनी विशाल सेना के साथ कौशाम्बी पर चढ़ाई करदी। घमासान युद्ध हुआ। चण्डप्रद्योतन की विशाल सेना के समक्ष शतानीक न ठहर सका। वह युद्ध में काम आया। विजयश्री से चण्डप्रद्योतन प्रफुल्ल हो उठा।

अब उसकी खुशी का ठिकाना न था। रानी मृगावती से शीघ्र ही उसका मिलन होगा इस बात का ध्यान आते ही उसका रोम रोम आनन्द से नाच उठा। उसने गर्व और सज-धज के साथ नगर में प्रवेश किया। वह तो इसी ध्यान में विभोर था कि महल में प्रवेश करते ही सुन्दरी मृगावती का दर्शन होगा। जिसके मनमोहक चित्र ने उसे मोहित कर रखा है, बावला बना रखा है उसी मृगावती से अब मिलने में कोई देर नहीं होगी। आज उसका चिर दिनों का स्वप्न सच्चा होगा। परन्तु शोक उनकी सारी आशाएं अतृप्त की अतृप्त ही रह गईं। सुन्दरी मृगावती अब वहां कहां थी? वह तो श्रमण भगवान् महावीर के धर्म राज्य में कुछ ही घड़ी पूर्व प्रविष्ट हो चुकी थी, इस संसार के भोग विलास से कहीं ऊपर। श्वेत वस्त्रों से आवृत एक तेजस्वी साध्वी के सामने चण्डप्रद्योतन ने अपने को खड़ा पाया, जिसने हाथ उठाकर उसे धर्माचरण का उपदेश दिया। राजा चण्डप्रद्योतन का वासनादीप्त मुख लज्जा से अवनत हो गया। उसके सामने उसकी विजय भी पराजय के रूप में खड़ी होकर अट्टहास करने लगी। उसका गर्वित उन्नत मुख सहसा नीचे की ओर झुक गया।

★

इन नन्हें नन्हें ओठों का दूध भी नहीं सूखा। यह बात उचित नहीं है कुमार।

कुमार ने अत्यन्त नम्रता के साथ कहा—अवश्य कर मुझे आपका आशीर्वाद चाहिये। एक क्षत्रिय कुमार स्वार्थ या परमार्थ किसी के भी हेतु शत्रु पर तलवार चला सकता है, तो फिर क्या कर्मरूपी शत्रुओं पर विजय प्राप्त करने के लिए क्या इन कष्टों से विचलित होगा? क्या वह इन कष्टों को महत्व देकर इस पवित्र मार्ग का अनुसरण करना छोड़ देगा? क्या उमर इसमें क्या बाधक हो सकती है? मां के सामने तो मनुष्य हर समय दुधमुहा बच्चा ही रहता है। मातृत्व इसे कभी स्वीकार नहीं करता कि वह बहुत बड़ा हो गया है।

कुमार की दृढ़ धारणाओं से देवकी और कृष्ण विचलित हो उठे। उनको पूरा विश्वास हो गया कि अब यह घर पर रहने वाला नहीं। फिर भी अनेक प्रकार की निष्फल चेष्टाएं की गईं पर सब व्यर्थ हुआ। आखिरी प्रलोभन में कहा गया कि वह केवल एक दिन के लिये राज्य करना स्वीकार करले। उसके पश्चात् दीक्षा ग्रहण कर सकता है। केवल एक दिन के लिए उनकी मां उन्हें राजा के वेश में देखना चाहती है। अब त[illegible] उन्हें विश्वास था कि इस बार में वह उसे समझा लेगी। अपने पुत्र को साधु होने से बचा लेगी।

[illegible] में कहा—देखो, यह बात मानोगे!

चुपचाप खड़े होकर अपने नये राजा के आदेश की प्रतीक्षा करने लगे।

कुमार ने सिंहासन पर आरूढ़ होते ही सर्व प्रथम हुक्म दिया कि हमारे लिए मुनिउपकरण तैयार कराये जायें।

आज्ञा सुनते ही सबका माथा ठनका। सबको पूर्ण विश्वास होगया कि हम नये राजा की छत्रछाया में एक दिन से अधिक नहीं रह सकेंगे। पहले हुक्म ने ही सबको हतोत्साह कर दिया।

दूसरे दिन द्वारकावासियों ने अपने प्रिय कुमार और नये राजा को अलङ्कारों और सुन्दर चमकीले बहुमूल्य वस्त्रों से रहित श्वेत वस्त्रों से आवृत हाथ में रजोहरण लिये साधुवेश में नगर से बाहर तपस्या के लिए जाते हुए देखा। कुमार के दोनों वेश देखने वाले पुरजनों को शायद यह वेश सबसे अधिक सुन्दर अलौकिक लग रहा था। सबका हृदय कुमार के पगों के पीछे खिंचा जा रहा था। उनकी आंखों से अश्रुधारा बह चली थी सबका हृदय भर आया था। कुमार की इस उत्कृष्ट वैराग्य भावना ने सबको वश में कर लिया।

× × × ×

सूर्य को अस्त होते देखकर एक आदमी जल्दी जल्दी जंगल से नगर की ओर बढ़ा चला आ रहा था कि उसने एक सघन वृक्ष के नीचे तपस्या करते हुए एक युवा ध्यानी को ध्यानस्थ मौन खड़ा देखा। उसका सिर श्रद्धा से नत होना ही चाहता था

कि धोखा है ? यह क्या ? यह मैं क्या देख रहा हूँ ? यह लड़का तो स्वयं गजकुमार है मेरे दामाद । उसने आश्चर्य पुका- कुमार आप यहां और इस वेश में ? कहीं मैं स्वप्न तो नहीं देख रहा हूं ? यह छल तो नहीं है ? किसी मायावी का तो यह दृश्य नहीं ? मुझे भ्रम तो नहीं हो रहा है ? किन्तु नहीं यह नहीं हो सकता । मेरी आंखें धोखा नहीं खा सकती । पर कुमार आपने यह क्या स्वांग रचा है ? इस एकान्त निर्जन भयंकर वन में इस तरह अकेले खड़े रहने में आपको भय नहीं लगता ? यह क्या आपके योग्य है ? इस फकीरी को लेने के लिए क्या दुनियां कम थी ? राजमहलों को त्याग कर यहां आने की क्या सूझी ? यहां आपको कौन सा सुख मिलेगा ? किन्तु महाराज ने यहां आने की आज्ञा कैसे दी ? अगर साधु ही बनना था तो मेरी पुत्री से मंगनी क्यों की ? बोलिये जवाब क्यों नहीं देते ? आपको गृह त्याग का अधिकार ही क्या रह गया था ? कुमार अब भी मैं प्रार्थना करता हूं कि इसे छोड़ छाड़कर राज महलों में चलिये । नहीं बोलते ? अच्छा ठहरो अभी बताता हूं फिर देखता हूं यह स्वांग कितनी देर तक रहता है । तत्काल ही उस चण्डाल-कर्मी ब्राह्मण ने पास की एक दग्ध चिता में से जलते हुए अङ्गारे निकाल कर ध्यानस्थ कुमार के सिर पर मिट्टी की पाल बनाकर भर दिये सारी दुनिया दहल उठी पर्वतों तक का कलेजा कांप उठा । किन्तु नहीं पसीजा उस चण्डाल

आक्रान्ता का हृदय। क्रोध के आवेग में थोड़े से अक्षर उसने और रच दिये।

कुमार ने उसके किसी काम में बाधा न डाली। अपने आत्म ध्यान में उनका मन लगा था, वह वैसी तरह लगा रहा। राग-द्वेष, सुख-दुख, इच्छा अनिच्छा सबसे ऊपर, सबसे परे! उनके इस निर्विरोध और निर्विकार रूप के आगे आततायी आक्रान्ता को अपनी पराजय मूर्तिमान दिखने लगी। वह कुमार की मौन मूर्ति के आगे स्तब्ध खड़ा रहा।

हां देख लीजिए। प्यास भी बहुत जोर से लगी हुई है—दमयंती ने जीभ से ओठों को तर करते हुए कहा।

नल ने कहा— देखता हूं कहीं जल मिल जाय।

किसी तरह कुछ फल और पानी लेकर नल पूर्व स्थान पर पहुंचा तो देखा दमयन्ती निःशंक सो रही है। नल ने सोचा—ओह क्या बेफिक्री से सो रही है! इतनी अधिक थक गई कि भूखी प्यासी ही सो गई। आध घंटा भी राह न देख सकी। भाग्य की बात है इसे मेरे कारण यह दिन भी देखने थे। वरना कहां राजमहल की कोमल मखमली शय्या और कहां पेड़ तले यह ऊबड़ खाबड़ जमीन। कुछ देर पश्चात् नल ने धीरे से दमयंती को जगाकर कहा—प्रिये! उठकर देखो तो मैं तुम्हारे लिए क्या लाया हूं।

दोनों ने मिलकर थोड़ा थोड़ा खाकर सतोष की सांस ली।

दमयंती की आंखों मे नींद भरी हुई थी बार बार उबासियां ले रही थी। यह देखकर नल ने कहा—तुम अब सो जाओ दमयंती।

और आप? पूछा दमयती ने

मैं भी सो जाऊंगा। तुम सो जाओ।

एक दिन जब किसी भी तरह थोड़े से भी फलफूल नहीं मिले तो नल ने कहा—मेरी एक बात मानोगी प्रिये?

दमयती ने व्यग्र होते हुए कहा—जल्दी आज्ञा कीजिए आज आपको यह संदेह कैसे हुआ कि मैं आपकी आज्ञा टाल दूंगी।

नल बोले—संदेह नहीं है किन्तु डर है कि कहीं तुम अस्वीकार—

आप आज्ञा तो दीजिये—दमयंती ने बीच ही में बोलते हुए कहा।

नल ने कहा—तुम कुंडिनपुर या कौशल क्यों नहीं लौट जातीं ?

यह कैसे हो सकता है प्रभो ! आपको जंगल में अकेले इस दशा में छोड़कर मैं राजमहलों में रहूँ यह मुझसे कभी नहीं हो सकता। जैसी भी रहूँगी आपके साथ रहूँगी। आपका साथ छोड़कर कहीं भी जाना नहीं चाहती—कुछ निकट सरकते हुए उसने कहा।

किन्तु तुम ··

मुझे क्षमा करें। इस विषय में मैं कुछ भी सुनना नहीं चाहती। उसके स्वर में दृढ़ निश्चय था।

नल ने एक दीर्घ निश्वास छोड़ते हुए कहा—यह तो मैं पहले ही से जानता था।

रात पड़ गई। चारों ओर जंगल में पक्षियों का कलरव बन्द हो गया। सब पक्षी अपने अपने नीड़ों में विश्रान्ति के लिए चले गए। दमयंती को भी नींद आ गई।

किन्तु नल, उसे चैन कहाँ। दमयंती का दुर्भाग्य हुआ दुख उनके सामने था। देह में अब शक्ति भी नहीं रह गई थी। नंगे पैरों चलने के कारण जगह जगह घाव पड़ गए थे। वन झाड़ियों में उलझ उलझ कर वस्त्र तार तार हो गए थे। इस तरह कब तक दमयंती अधूरे पेट फल-फूल खाकर जिन्दा रह सकेगी।

किन्तु अन्य कोई उपाय भी तो नहीं दिखता । अगर दमयंती को छोड़कर चला जाऊं, किन्तु दमयंती का क्या होगा । वह कहां जायगी ? अकेली वन में कहां भटकेगी ? और मेरा क्या यही धर्म है? यह दृश्य उसकी आंखों में तैर गया जब स्वयंवर में राजकुल में दमयंती ने उपस्थित बड़े बड़े राजाओं को छोड़कर उसे वरमाला पहनाई थी। यह सुनकर कि यह कोशल के वीर राजकुमार नल हैं। जिनकी वीरता जगत प्रसिद्ध है । एक हुंकार से शत्रु कांप उठते हैं। कलाओं में निपुण, विद्या प्रेमी, और परोपकार के लिए मर मिटने वाले हैं । क्या इसी आशा पर उसने वरा था । धिक्कार है मुझे जो अपनी आफत टालने की गरज से उसे त्याग जाने की सोचता हूं किन्तु इससे दमयंती का तो भला नहीं होगा । उसने दमयंती के चीर पर लिखा—प्रिये मैं तुम्हें अकेली छोड़कर जा रहा हूं किन्तु कहां यह मैं स्वयं नहीं जानता । तुम्हें इस अवस्था में अकेली छोड़ने को जी नहीं चाहता किन्तु अन्य कोई उपाय भी नहीं है । मेरे रहते तुम कभी मेरे इस कठोर आदेश को पालन नहीं कर सकती । इसलिए मैं तुम्हें इस भयंकर सुनसान वन में अकेली छोड़कर जा रहा हूं । इसी वृक्ष के निकट से जो दो मार्ग जाते हैं-उसमें पूर्व दिशा का मार्ग कुंडिनपुर को और पश्चिम का कोशल को । अब यह तुम्हारी इच्छा है कि तुम किसी एक को चुनो । यह लिखकर नल आगे बढ़ने लगा किन्तु पैर मोम हो रहे थे । चारों ओर से उसे धिक्कार सुनाई दे रहा था वह पागलों की तरह चिल्ला पड़ा मैं निर्दोष हूं । यह सब मैं

दमयन्ती के भले के लिए किया है। मेरा इसमें कुछ भी दोष नहीं। पृथ्वी और आकाश के देवताओ! तुम साक्षी रहना। अपनी प्रिया के प्रति नल अन्याय नहीं कर रहा है। उसके मंगल की कामना से वह उसे त्याग कर जा रहा है और यही पवित्र भावना उसकी रक्षा करेगी, उसे संकट पथ में निर्विघ्न पार करेगी। और वह बेतहाशा भाग चला अनिश्चित मंज़िल की ओर।

पांच

अतिमुक्त

भगवान महावीर के प्रिय शिष्य गौतम एक बार पोलासपुर नगर के राजमहलों के निकट से होकर जा रहे थे। वहीं पर राजकुमार अतिमुक्त खेल रहे थे। अचानक उनकी दृष्टि जाते हुए साधु पर पड़ी। उनकी प्रभावशाली प्रतिभा तथा विचित्र वेश से कुमार बहुत प्रभावित हुए। वे खेल छोड़कर साधु की तरफ आये और पूछा—महाराज! आप कौन हैं? आप कहां से आये हैं?

गौतम ने अपनी सहज मृदुता के साथ कहा—हम जैन साधु हैं कुमार!

आप जैन साधु हैं। आप क्या काम करते हैं? कुमार की जिज्ञासा बढ़ी।

हम लोग धंधे के रूप में कुछ काम नहीं करते कुमार! हमने दुनिया के समस्त धंधे त्याग दिये। दिन रात आत्मकल्याण में लगे रहना ही हमारा काम है।

किन्तु आपकी गुजर कैसे चलती है?—कुछ सोचकर कुमार ने पूछा।

हम साधुओं की गुजर का क्या। हमें इसकी चिन्ता नहीं। गृहस्थों के यहां जहां से भी शुद्ध आहार मिल जाता है ग्रहण कर लेते हैं। कभी नहीं भी मिलता तो भी हम असन्तोष नहीं

और तब हंसकर माताजी कहतीं—लड़कियों पर हाथ नहीं उठाना चाहिये कुमार! तुम दोनों की नाव अलग अलग थोड़े ही है। जाओ खेलो। और दोनों एक दूसरे को देखकर अपनी हंसी को न रोक सकते। दोनों में सुलह हो जाती। कुमार अब अपने को और अधिक न रोक सके तुरन्त अपने हाथ में का काष्ठपात्र उस नाले में छोड़ दिया और बचपन की तरह ही खुश होकर चिल्लाने लगे, आओ देखो-मेरी नाव तिरे रे, मेरी नाव तिरे।

साथ के साधुओं ने देखा तो कहने लगे—यह क्या कर रहे हो साधु? किन्तु कुमार अपने खेल में मस्त थे। अन्त में साधुओं ने कहा—चलो ये नहीं मानेंगे। एक बोला—भगवान् ने भी क्या समझ कर दीक्षा दी है जिसे इतनी भी समझ नहीं।

दूसरा बोला– प्रभु ने कुछ सोच समझ कर ही दीक्षा दी होगी। उनकी आलोचना करने का हमें अधिकार नहीं।

तीसरा बोला—वाह अधिकार क्यों नहीं हर मनुष्य को अपने विचार रखने का अधिकार है। कुछ भी हो इस तरह की दीक्षा हितकर नहीं हो सकती। इन्हें ही देखो ना कहने पर भी नहीं सुनते।

उनमें से एक वृद्ध साधु ने कहा—हर एक वस्तु को एकान्त रूप से नहीं कहा जा सकता। जो दिल में आया तत्काल निर्णय दे देने के पूर्व भगवान् से निर्णय कर लेना चाहिये।

अब सबसे छोटे साधु स्थूलिभद्र की बारी थी। सबका ध्यान उस ओर खिंच गया। स्थूलिभद्र ने हाथ जोड़कर कहा—आप आज्ञा हो तो कोशा गणिका के यहां अपना चातुर्मास करूं ?

गुरुदेव ने इन्हें भी स्वीकृति दे दी।

साथ के अन्य साधु मुस्कराए। एक दूसरे से कानाफूसी होने लगी—विचार तो अच्छा है। जिसके यहाँ बारह बारह वर्ष बिताये वह क्या इतनी जल्दी भुलाई जा सकती है। इस बार पुनः उसके पंजे से निकल आये तो पता चले। गुरुदेव ने भी तो तत्काल स्वीकृति दे दी। आचार्य से यह कानाफूंसी छिपी न रही किन्तु वे बिना कुछ बोले ही वहां से उठकर चले गये।

× × × ×

अरे ! यह साधु इधर क्यों चला आ रहा है ? शायद इसे मालूम नहीं कि यह कोई स्थानक नहीं किन्तु पाटली की प्रसिद्ध गणिका का भवन है। कोशा की परिचारिकाओं में से एक ने कहा।

दूसरी ने टालते हुए कहा—जा उसे बतादे कोई परदेशी मालूम पड़ता है।

यूं हां कह देना डरती क्यों है। तुम्हारे वीरभद्र की तरह ये साधु लोग प्रेम थे ...... ।

धत् ज्यादा बात अच्छी नहीं। मैं अभी कहती हूं। महाराज यह एक गणिका का भवन है आप शायद भूल से ।

आगन्तुक साधु ने यह गम्भीर स्वर में कहा—मैं जानता हूं। आप [illegible]

तो नहीं दे रही हैं ? निश्चय कुछ न कर सकी। दिल में विचारों का एक तूफान सा उठ गया। आप, आप मुझसे ······

हां स्थूलिभद्र ने उत्तर दिया। मैं यहां अपना चातुर्मास बिताना चाहता हूँ। यदि तुम्हारी आज्ञा हो तो।

वाणी में वही जादू। स्वर में वही मिठास। वही आप आप स्थूलिभद्र······।

हां कोशा ! क्या स्थूलिभद्र को इतना जल्दी भूल गई ?

स्थूलिभद्र ! कोशा का मन घबराने लगा। विश्वास करे तो कैसे, उसका सरताज इस वेश में। घुंघराले बालों के स्थान में मुंडन किया हुआ सिर। पैर धूल से भरे हुए। बहुमूल्य वस्त्रों के स्थान पर श्वेत सादे वस्त्र। उसे अपने कर्त्तव्य का ज्ञान न रहा। सुध बुध खो बैठी। सोचा था स्थूलिभद्र के मिलने पर वह उन्हें मीठे उपालम्भ देगी। तब तक रूठी रहेगी जब तक वह उनसे यहीं रहने की प्रतिज्ञा न करवा लेगी।

किन्तु ये तो वे स्थूलिभद्र नहीं। उसकी आंखों से अविरल धार बह चली। वह अपने को और अधिक न संभाल सकी। वहीं बेहोश होकर जमीन पर गिर पड़ी।

दासियां कोशा की यह दशा देखकर घबरा गईं। मालकिन को होश में लाने की चेष्टा में इधर उधर दौड़ पड़ी। गुलाब जल छिड़का गया। शीतल मन्द मन्द हवा से कुछ समय बाद कोशा को होश आया। वह उठ बैठी। और इस तरह देखने लगी

क्यों क्या पड़े रहने से फिर फस जाने का भय है-एक विचित्र तीक्ष्ण दृष्टि डालते हुए कोशा ने कहा।

साधु मुस्कराए। नहीं कोशा यह बात नहीं है। अगर भय होता तो यहा आता ही क्यों ? हमारे नियम ही कुछ ऐसे हैं कि-

और बारह वर्ष तक ये नियम कहा गये थे। क्या मैं जान सकती हूँ ? उसके स्वर में जिज्ञासा की जगह व्यंग ही अधिक था।

तब मैं अन्धकार मे था कोशा। माया मोह का आवरण छाया हुआ था। तुम्हारा प्रेम मुझे कुछ भी सोचने का मौका नहीं देता था। मैं तुम्हारे प्रेम में डूबा हुआ था। विषयवासना में इतना उलझ गया कि अपना सत्य ही भूल गया। जीवन की यह निस्सारता उस समय उल्टी ही लगती थी।

तो क्या अब तुम प्रेम कुटिया में अन्य कोई वस्तु की लालसा लेकर आए हो ? क्या अब मेरा स्वार्थी प्रेम तुम्हारे पथ का कांटा नहीं बनेगा ?-और वह टकटकी लगाकर देखने लगी अपने वाक्य का प्रभाव।

नहीं कोशा ! अब तुम्हारा प्रेम मेरे पथ का कांटा नहीं बन सकता। किन्तु और सहायक होगा। मैं तो तुम्हें भी संसार की निस्सारता बताना चाहता हूँ।

सत्य का दर्शन कराना चाहता हूँ। दुनिया यह न कहे कि स्थूलभद्र स्वार्थी था। उसने कोशा को धोखा दिया। तुम्हारा यह प्रेम मेरे [illegible] मात्र न रह जाय।

विह्वल बना देने वाली मस्ती टपक रही थी। किन्तु जिसके लिए यह सब हो रहा था वह तो गंभीरमुद्रा में इस दुनियां से परे विचारों की दुनियां में विचर रहे थे।

कोशा ने मन्द किन्तु संगीतमय शब्दों में कहा—ध्यानीजी महाराज ! जरा ध्यानमुद्रा खोलिये। दासी भोजन लेकर आई है।

स्थूलिभद्र चौंके आंख उठाकर देखा, कोशा के अंग अंग मानों नाच रहे थे। बहुमूल्य अलंकार और बहुमूल्य परिधान उसके अंगों की शोभा बढ़ा रहे थे। एक हाथ में भोजन सामग्री से भरा हुआ थाल था और पीछे पीछे और भी दो तीन दासियां सामग्री लिए खड़ी थीं।

स्थूलिभद्र ने गंभीर स्वर में पूछा—यह सब क्या है कोशा ?

कुछ भी तो नहीं। आप भूखे भी हैं इस दासी पर कृपा करके भोजन कीजिये।

इतनी सारी सामग्री एक मनुष्य के लिए। यह सब व्यर्थ क्यों किया ? यह सब हमारे किसी काम की नहीं कोशा !

"यह सब किसी काम की नहीं।" सब व्यर्थ है कोशा को यह वाक्य तीर सा लगा। बारह वर्ष तक कोशा ने हाथ से खिलाया है। वह अच्छी तरह जानती है कि स्थूलिभद्र को क्या पसन्द है और क्या नहीं। किन्तु आज तो उन्होंने एक नई ही समस्या उपस्थित करदी। क्या उसका पुराना ज्ञान अब किसी काम का नहीं रहा।

नहीं कोशा। यह हमारे नियम विरुद्ध है। अभी तो बहुत दिन पड़े हैं।

आशा बंधाती आपको बहुत आती है, और वह तुरन्त वहां से चली गई। सारी सामग्री ज्यों की त्यों पड़ी रही। किसी ने आंख उठाकर भी उस ओर नहीं देखा। पराजित कोशा पटों विस्तर पर पड़ी तड़फती रही। बारह वर्ष बाद अपने प्यारे को पाया भी तो किस रूप में। आज उसको वह पाकर भी पा न सकी। वह स्थूलि को कितना चाहती है कितना मानती है। उसने उसके लिए क्या नहीं किया? क्या नहीं त्यागा। किन्तु स्थूलिभद्र, उसे भी तो कितना ध्यान है साधुवेश में ही सही पर सुध तो ली। पर अब वह उसे इतनी सरलता से दूर नहीं होने देगी। वह अपनी समस्त शक्ति लगाकर भी उसे अपना बना कर रहेगी। इन्हीं विचारों में वह उलझी रही और न जाने कब तक उलझती रहती अगर निद्रादेवी अपनी शांत गोद में थपकी देकर न सुला देती।

स्थूलिभद्र को फंसाने के लिए कोशा ने अनेक प्रयत्न किये किन्तु बजाय उनको फंसाने के स्वयं ही उनकी ओर झुकती गई। उसके मोह का नशा उतर गया। अब उसे स्थूलिभद्र की आध्यात्मिक बातें अधिक पसन्द आने लगी। विलासिता का स्थान सादगी ने ले लिया। आभूषण उसको भार स्वरूप लगने लगे। कभी जिनको पहनकर वह फूली नहीं समाती थी। इस सादगी में उसका सौन्दर्य और अधिक निखर उठा। पर अब यह रूप उसके गर्व की वस्तु न थी। रूप का पारखी ही अ

हुए बैठे हुए हैं तब उसे रूप का करना ही क्या है। पुरानी घटनाएं एक एक करके स्मरण हो उठीं। सोया संगीत जाग उठा। अंगुलियों ने सितार पर विरह की एक अपूर्व तान छेड़दी। स्थूलिभद्र के कानों में भी वह दर्द भरी स्वर लहरी पहुँची। स्थूलिभद्र एक क्षण तक किसी विचार में डूबे रहे फिर कुछ सोचकर कोशा की तरफ चल पड़े। ज्योंही कोशा की नजर स्थूलिभद्र पर पड़ी चौंक उठी। भय और आश्चर्य से उसकी अद्भुत अवस्था हो गई। मानों चोर रंगे हाथों पकड़ा गया हो। वह न हिल सकी न डुल सकी। उसकी गीली पलकें शर्म से झुक गईं। वह इस अवस्था में स्थूलिभद्र के सामने होने के लिए तैयार न थी।

स्थूलिभद्र ने देखा कोशा बहुत ही सादे वस्त्र पहने हुए है। अंगों पर अलंकार नाम मात्र को नहीं। मुख म्लान है। शोक में डूबा हुआ। आंखों में बादली उमड़ पड़ी है जिसे रोकने की वह विफल चेष्टा कर रही है।

स्थूलिभद्र ने पुकारा कोशा!

कोशा की भीगी पलकें ऊपर को उठ कर रह गईं। मानों कह रही थीं अब और क्या चाहते हो?

स्थूलिभद्र ने फिर पुकारा—यह तुम्हारा क्या हाल हो रहा है कोशा। तुम इतनी दुखित क्यों हो रही हो?

कोशा ने अपने को स्वस्थ करते हुए कहा-क्या सचमुच तुम्हें इससे दुख होता है?

स्थूलिभद्र ने बड़े शांत स्वर में कहा—हाँ कोशा, मुझे दुख होता है और बहुत अधिक। तुम्हें याद होगा एक समय तुम सारे नगर के लोगों के मनोरंजन का साधन थीं। सारा नगर तुम्हारे रूप की, तुम्हारी कला की प्रशंसा करता था। देश देश में तुम्हारी ख्याति थी। पैसे की तुम्हारे यहाँ वर्षा होती थी। किन्तु जब से मैं आया तुम मेरी होगई, केवल मेरी। किन्तु क्या यही जीवन था? यही उद्देश्य है जीवन का। तुम्हारा प्रेम मेरे तक ही मर्यादित रहे क्या यह ठीक है? यह ठीक है कि एक समय था जब मेरा प्रेम भी तुम्हारे तक ही बंधा हुआ था। इसीलिए मैंने घर बार, माता पिता तथा समस्त परिवार को त्याग कर तुम्हारे यहाँ रहा। किन्तु फिर भी मुझे शांति नहीं मिली। वह प्रेम विशुद्ध प्रेम न था, वह शुद्ध सच्चा सुख न था। जिसका अंत दुःखमय था। जिस तरह पर तुम्हें सुख है, जिस विलासिता को तुम भोग रही हो, वह क्षणिक है। नाशवान है। बुझते दीपक की भांति। समस्त संसार के जीवों को अपने तुल्य समझ सबकी भलाई को अपनी भलाई समझो। आत्म मात्र का अपने सम और [illegible] जा सकता है। [illegible]

आए उपसर्ग बताये । गुरुजी बहुत प्रसन्न हुए । सबकी प्रशंसा की । किन्तु स्थूलिभद्र अभीतक नहीं लौटे गुरुजी प्रतीक्षा कर रहे थे और अन्य साधु मजाक उड़ा रहे थे । सबके बीच एक ही चर्चा थी । सबका मत एक था—अब वह नहीं आयगा रूपों को छोड़ कर आही नहीं सकता । हम तो पहले ही से जानते थे । कोशा ने बारहवर्षं तक अटका के रक्खा । वह क्या यों इतनी आसानी से छोड़ेगी । वेश्या के यहाँ जब उसने अपना चतुर्मास सुना तब ही विचार स्पष्ट हो गए । साधुत्व क्या इतना सरल है । पर गुरुजी .. .. कि देखा स्थूलिभद्र प्रसन्न मुख चले आ रहे हैं । आकर विधि सहित गुरुदेव को नमस्कार किया फिर क्रमशः अन्य साधुओं को ।

गुरुदेव ने स्थूलिभद्र से कुशल क्षेम पूछी ।

स्थूलिभद्र ने सारा वृत्तान्त सुना दिया ।

गुरुजी की आंखें चमक उठीं । उन्होंने स्थूलिभद्र को अपने पास का आसन दिया ।

साधु जल उठे गुरुजी के इस पक्षपातपूर्ण व्यवहार से । इनने कठिन [illegible] नहीं और [illegible] सम्मान [illegible] को आज्ञा [illegible] रहे । अब [illegible] को सुनकर [illegible] को इसा

ईर्ष्या नहीं करनी चाहिये। साधु को ईर्ष्या शोभा नहीं देती। तुमने राग द्वेष पर विजय पाने के लिए घर बार छोड़ा है। विवेक से काम लो। किन्तु हठी साधु अपने विचार पर अटल रहा। उसने कहा—गुरुजी आपको यह पक्षपात नहीं करना चाहिये। आपके लिए तो सब समान हैं। हारकर गुरुजी ने अनिच्छापूर्वक स्वीकृति देदी।

× × × ×

कोशा और उसकी दासियां अब साधु समाज से अपरिचित न रही थी। पहरेदार दासियों ने देखा स्थूलभद्र की तरह के वस्त्र पहने एक साधु आरहे हैं। उन्होंने बिना कुछ पूछे ताछे हाथ जोड़कर नमस्कार करते हुए कहा—अंदर पधारिये महाराज! साधु ने साश्चर्य चारों ओर देखा और एक दासी के पीछे होगए। दासी ने कोशा की तरफ इशारा करते हुए कहा--यही हैं हमारी मालकिन।

कोशा ने साधु को देखते ही नमस्कार किया।

साधु बोले—बहन मैं तुम्हारे यहां अपना चातुर्मास बिताना चाहता हूं यदि तुम्हारी आज्ञा हो तो।

कोशा ने एक बार साधु को नीचे से ऊपर तक अच्छी तरह देखा। तत्काल ही उसके सामने मुनि स्थूलभद्र की आकृति आगई। एक दिन वे भी इसी तरह इसी वेश में उसके यहां आए थे चातुर्मास बिताने के लिए और वह खोगई उन्हीं विचारों के सागर में।

साधु ने शांति भंग करते हुए कहा—क्यों बहन ...!

उसे चेतना आई। अपने को संभालते हुए कहा—मेरे अहोभाग्य महाराज! आप सहर्ष अपना चातुर्मास यहीं निर्वाह पधारिये। मैं आपको भवन दिखा दूं। जहां भी आपको अनुकूल पड़े विराजें।

साधु ने एक एकान्त स्थान को अपने रहने के लिए चुना। उन्होंने कोशा को अपनी कल्पना से बिलकुल भिन्न पाया। उन्होंने सोच रखा था कोशा के राजमहल से भवन में प्रवेश करते ही वे एक चंचल सुन्दरी को देखेंगे। जो बहुमूल्य जेवरों और बेशकीमती वस्त्रों से लदी होगी। पाटलिपुत्र की प्रसिद्ध गणिका की विलासिता, शानशौकत और कामबाणों से लोहा लेना होगा। पर इससे क्या भय है वह जंगल में मौत के मुंह में रह आया है। उसके लिए यहां आनन्द में अपने संयम को निभाने में है ही क्या। गुरुजी समझते हैं कि स्थूलिभद्र ही इस योग्य है किन्तु मैं उन्हें दिखा दूंगा कि मैं क्या हूँ। किन्तु यहां तो और ही कुछ देखा। न तो यहां वेश्याओं की सी कोई सजधज ही है और न कोई आडम्बर। कोशा की देह पर मामूली पोशाक है। अलंकार तो नाम को भी नहीं। कोशा कभी कभी अतिथि साधु के पास जाती थी। उनकी ज्ञान चर्चा और सदुपदेश को सुनने में कोशा को अलौकिक आनन्द मिलता था। किन्तु [illegible] उसने साधु के [illegible] में [illegible] उनकी और आकृष्ट

होते देखा तो उसको बहुत दुख हुआ। उसने साधु के पास आना जाना बन्द सा कर दिया।

ज्यों ज्यों दया की, मर्ज बढ़ता ही गया। साधु की अजीब हालत होगई। अपना जप तप सब कुछ भूल गये। आंखें किसी को ढूंढती थी। किसी के दर्शन के लिए उत्सुक थी। कान द्वार की ओर लगे रहते। "कोशा, कोशा" की प्रतिध्वनि उसके रोम-रोम से निकलने लगी। समुद्र ऊपर से शांत दिखाई पड़ रहा था, उसके अन्दर बड़वानल जल रहा था। वह अब किसी तरह अपने को न रोक सका और स्वयं कोशा की तरफ चल पड़ा।

कोशा ने जब साधु को देखा तो चौंक पड़ी। आप इस समय रात को यहां क्यों आये हैं? उसने कठोरता से पूछा।

साधु सिटपिटा गया। किन्तु कुछ देर बाद ही बोले—बहुत दिनों से तुम्हारे दर्शन नहीं किये, कोशा।

इस अवस्था में भी कोशा को हंसी आगई। मैं दर्शन योग्य कबसे होगई एक साधु के लिए। किन्तु उसने वाक्य को दबा कर कहा- क्या स्त्री से मिलने का यही समय है?

तुम तो साधु को एक दम भूल गई कोशा किन्तु मैं तुम्हें हर घड़ी याद करता था। तुम तो सब कुछ जानती हो कोशा। मैं जल रहा हूं। मुझे मारना या जिलाना तुम्हारे हाथ में है। मेरी दशा ... आज इस दास को अपनी पूजा करने दो।

कोशा पर तो मानो आसमान टूट पड़ा। उसने उसका

मार्मिक पीड़ा पहुंची। उसने सोचा एक स्थूलिभद्र थे जिन्हें रिझाने के लिए मैंने भर सक प्रयत्न किया किन्तु सब व्यर्थ गया और मुझे स्वयं को सही मार्ग पर ले आए और एक ये हैं। इनकी बिगड़ी मनोवृत्ति को देख कर इनसे मिलना जुलना तक बन्द कर दिया किन्तु इससे भी कोई लाभ नहीं हुआ। और आज स्वयं चले आए। मैंने अपना साज शृंगार त्याग दिया किन्तु इस रूप का क्या करूं ! भगवान् क्या स्त्रियों को इसीलिए रूप देते हो ? अब मैं क्या करूं- इन्हें कैसे समझाऊँ इस समय जो कुछ भी कहूंगी इन्हें अरुचिकर होगा। व्यर्थ जायगा। उसे एक उपाय सूझा। उसने कहा—मुनि आप किस होश में हैं ? आप तो जानते ही हैं कि मैं एक वेश्या हूं और वेश्याएं मुफ्त में किसी से बात भी नहीं करतीं।

मुनि विचार में पड़ गए। बोले तुम तो जानती हो कोशा कि मेरे पास कुछ भी नहीं है।

तो मैं मजबूर हूं--कोशा ने लाचारी का भाव दर्शाते हुए कहा।

साधु ने अत्यन्त दीनता के स्वर में कहा-ऐसा न कहो कोशा! मेरा दिल न तोड़ो। मुझे ऐसा उत्तर देकर निराश न करो! अब मैं तुम्हारे बिना जिन्दा नहीं रह सकता। इसके लिए मेरी जान तक हाजिर है। तुम जो कुछ कहो मैं करने को प्रस्तुत हूं!

जिसे अपने चरित्र और संयम का इतना गुमान था वही कोशा के चरणों में लुट रहा था।

कोशा ने कहा अगर तुम्हारी यही इच्छा है तो यहां से दूर बहुत दूर नेपाल में वहां के महाराज साधुओं को रत्न कम्बल

प्रदान करते हैं अगर ला सको तो वही मेरे लिये ले आओ।

साधुने अत्यन्त प्रसन्न होते हुए कहा—बस इतनी सी बात। अवश्य जाऊँगा कम्बल लेने के लिए। तुम जो आज्ञा दो करने लिए तैयार हूं। इससे भी अधिक दुष्कर कार्य कहती तो भी तैयार था। आज ही प्रस्थान करता हूं। अब तो खुश हो ना?

कोशा कुछ न बोली। कुछ की एक दृष्टि फेंक कर चली गई।

× × × ×

मार्ग के अनेक कष्ट सहता हुआ साधु आखिर नैपाल पहुँच ही गया। किसी तरह रत्न कम्बल ले साधु वापिस लौटा। उसकी खुशी का कोई ठिकाना न था। उसने आदर से वह अपनी भेंट कोशा को देते हुए कहा—लो कोशा ! मेरी यह तुच्छ भेंट स्वीकार करो।

कोशा की आंखे भर आईं। उसने सोचा—ओह मैं कितनी अभागिन हूँ जिसके लिए एक तपस्वी साधु अपना चरित्र भ्रष्ट करने को तैयार है। क्या मैं यही दिन देखने को पैदा हुई थी। धिक्कार है मेरे इस यौवन को। सचमुच ईश्वर की सृष्टि में मैं एक अंधकार है। पर तत्काल ही साधु पर दृष्टि जाते ही उसने कम्बल [illegible] हाथ ले लिया इस तरह जैसे इसके लिए उसका कुछ मूल्य ही नहीं।

साधु को कुछ बुरा लगा किन्तु फिर सोचा यह भी इसकी एक चाल है।

घंटे पर घंटे बित गए किन्तु कोशा नहीं आई। साधु से अब न रहा गया। महीनों की जुदाई उन्होंने सही किन्तु अब एक एक पल भारी हो गया। आखिर साधु स्वयं कोशा की तरफ चला। पैर बढ़ते ही नहीं थे एक एक इंच चल चल कर कोशा के पास पहुँचा। यह, यह कोशा है या कोई इन्द्र के अखाड़े की अप्सरा। ऐसा मोहक रूप तो उन्होंने आज तक नहीं देखा। दूध के झागों के समान सफेद पोशाक पहने हुए सुराहीदार गरदन और उभरे हुए वक्षस्थल पर मुक्ता-मणियों की माला चम-चम करके चमक रही थी। पैरों में महावर लगा हुआ और सोने की पायजेबें पहने थी। अंग अंग से सौन्दर्य फूट रहा था। साधू बावला सा होगया। साधु एकटक उसकी ओर देख रहा था। किन्तु एकाएक साधु का चेहरा क्रोध से तमतमा उठा। उसकी इतनी मेहनत से लाई हुई बेश कीमती रत्न कम्बल का यह उपयोग कि उससे पैर पोंछे जाँय उसे पैर से कुचला जाय। उसने क्रोध के साथ कहा—पाटली की प्रसिद्ध गणिका को मैं इतनी मूर्ख नहीं समझता था इससे अधिक मूर्खता और क्या हो सकती है कि एक बहुमूल्य रत्न कम्बल से पैर पोंछे जाय। जानती हो! इसे प्राप्त करने में मुझे कितनी मुसीबतें उठानी पड़ीं? कितनी नदियां और पर्वत पार करने पड़े [illegible] वर्षा और घाम में रहा। भूख प्यास, अनेक दुख

प्रपंच रचे और तब इसे प्राप्त कर सका। जिसका तुम यह उपयोग कर रही हो।

कोशा अन्दर ही अन्दर मुसकराई। कृत्रिम रोष दिखाते हुए कहा- साधु इसमें इतने बिगड़ने की क्या बात है। अगर अनेक वर्षों का अनुभवी तपस्वी साधु अपने उत्कृष्ट चरित्र को इस तरह एक औरत के पैरों तले डाल सकता है तो उन्हीं पवित्र चरणों को इस नगण्य कम्बल से पोंछ लिया तो इसमें मूर्खता क्या हुई ?

बात साधु को लग गई। उसने विचार किया। उसे भान होने लगा, मैं एक साधु हूँ और यहाँ अपने चरित्र को कसौटी पर कसने आया था। उसका मुँहा लज्जा से झुक गया। पृथ्वी घूमती सी अनुभव हुई। गुरुजी के उन शब्दों की सचाई स्पष्ट हो गई। साधु को ईर्षा नहीं करनी चाहिये। किसी की बरा बरी नहीं करनी चाहिये। अभी तक वह इस योग्य नहीं कि एक वेश्या के यहा अपना चातुर्मास बिताये। भगवान् महावीर को भी जब देव दुखों से विचलित न कर सके तब उन्होंने अनुकूल उपसर्ग देने प्रारम्भ किये। मनुष्य कष्ट को सहन कर सकता है, अपना भान रह सकता है किन्तु अनुकूल परिस्थिति में विरला ही अपने को बचा सकता है। तुमने सिंह की गुफा के भयंकर कष्टों को जीत लिया किन्तु इस दुःख में तुम अपने को संयत रख सकोगे इसमें मुझे संदेह है। टूटे हुए हाथ पैर वाली और कटे हुए कान नाक वाली सौ वर्ष की बुढ़िया का सग भी

ब्रह्मचारी के लिए ठीक नहीं किन्तु यह सब बातें उस सन्त अच्छी नहीं लगी। जिसका सिर्फ वेशरूप ही सोचा सचमुच वह बड़ी उपकारिणी और सती स्त्री निकली। अगर यह न बचा लेती तो कहीं का न रहता।

साधु बोले—बहन ! मुझे क्षमा करो। काम ने मुझे अंधा बना दिया था। मुझे अपना कुछ भी भान न रहा। तुमने मुझे नारकीय जीवन से बचा लिया। गुरुजी ने मना किया। किन्तु उस समय तो मेरे पर यह भूत सवार था कि गुरुदेव स्थूलिभद्र का पक्ष ले रहे हैं। मैं महापापी हूँ। मैंने तुम जैसी देवी को कष्ट दिया। मुझे क्षमा करदो। साधु की वाणी में पश्चाताप और वेदना थी।

कोशा की आंखों से टपटप आंसू गिरने लगे। उसने कहा—यह आप क्या कह रहे हैं कष्ट तो मैंने आपको दिया, मैं ही अभागिन हूं। मेरे ही कारण आप सरीखे तपस्वी को इतना कष्ट सहना पड़ा। मैंने आपकी बड़ी आशातना की है, आप मुझे क्षमा करें।

इतने ही में दोनों ने स्थूलिभद्र को आते देखा। स्थूलिभद्र गुरु की आज्ञा से वहां पहुँचे थे। स्थूलिभद्र को देखते ही साधु उनके चरणों में गिर पड़े और कहा—आप धन्य हैं। मैंने अज्ञान में आप जैसे महान् तपस्वी का अनादर किया। आप मुझे क्षमा करें।

स्थूलिभद्र ने साधु को उठाते हुए कहा—यह आप क्या कर

प्रतिबोध

ध्यानी मौन और निश्चल मूर्ति-सा जड़वत पगडंडी से दूर खड़ा था। उसका वर्ण श्याम था या गौर यह कौन बता सकता था! शरीर पर जगह जगह बेलें छा गई थी। चिड़ियों ने भी अपने छोटे छोटे नीड़ बना दिए। पक्षी निर्भीक होकर उनमें रहते थे। उनकी चहल पहल, निर्भीकता से गुजरना ध्यानी को कुछ भी बाधा नहीं पहुँचाते थे। अलमस्त ध्यानी स्थिर दृष्टि किए अपने ध्यान में मस्त था। उसे इस दीन दुनियां की कुछ भी खबर नहीं थी। कुछ भी वास्ता नहीं था। बसंत खिल रहा है या पतझड़ झड़ रहा है इन सबका ब्योरा उसके पास न था। कितने दिन पक्ष मास बीत गए वर्ष इसकी सुध उसे न थी। उसे अपनी साधना से मतलब था जिसके लिए सुन्दर बलिष्ठ शरीर को सुखाकर कांटा बना दिया। पर इससे वह विचलित न हुआ। वह मानों इस दुनियां से परे कहीं विचर रहा था। उसे दुनियां की चालगति का कुछ भी भान न था। उसे तो केवल अपने लक्ष्य का ध्यान था जिसके लिए वह इस निबिड़ निर्जन वन में ध्यानस्थ खड़ा था। किन्तु इतना सब होते हुए भी उसे केवलज्ञान की प्राप्ति नहीं हो रही थी। अतएव दुःखी रहता था।

× × × ×

एक दिन महाप्रभु ऋषभदेव ने महासाध्वियों ब्राह्मी और सुन्दरी को बुलाया जो सांसारिक जीवन में उनकी पुत्रियां थीं।

महा साध्वियों ब्राह्मी और सुन्दरी ने वंदन करके कहा—'प्रभो! आदेश।'

प्रभु ने अपनी मन्द मुस्कराहट चारों ओर फैलाते हुए कहा—जानती हो साध्वियो! मैंने तुम्हें क्यों बुलाया है?

दोनों ने हाथ जोड़कर बड़े विनीत भाव से कहा—नहीं प्रभो!

प्रभु बोले—आज मैंने तुम्हें तुम्हारे संसारिक भाई महान तपस्वी योगीराज बाहुबली को प्रतिबोध देने के लिए बुलाया है?

प्रतिबोध देने! दोनों साध्वियां चकरीं। उन्होंने कहा—प्रभो हमारी क्या क्षमता है कि हम प्रतिबोध देंगी। एक दिन आपने तो फरमाया था कि वे भयंकर बन में उत्कृष्ट तपस्या कर रहे हैं। अपनी सुकुमार देह को सुखाकर कांटा बना दिया है। उन्हें हम क्या प्रतिबोध देंगी प्रभो!

प्रभु बोले—हां यह यथार्थ है। वे अब भी उसी प्रकार उग्र तपस्या में लीन हैं। दिन रात एक कर दिया है। किन्तु इतनी उग्र तपस्या करने पर भी उन्हें केवलज्ञान की प्राप्ति नहीं हो रही है।

उत्सुक साध्वियां बोलीं—यह क्यों प्रभो!

प्रभु बोले—तुमने उस भरत के साथ बाहुबली का घमासान हो रहा था [illegible] से भरत हार [illegible]
उस उसने [illegible]
[illegible]

कर बाहुबली का भी मान क्षीण उठा। उसने ज्योंही प्रतिद्वन्द्वी स्वरूप भरत पर हाथ उठाया कि अन्तर से पुकार उठी—बड़े भाई पर हाथ उठाना अनुचित ही नहीं पाप है। जिस राज्य को तुम्हारे पिता तथा बन्धु तृणवत समझकर त्याग गये हैं उसके लिए इतना निकृष्ट कार्य। उसने तत्काल युद्ध बंद कर दिया और अपने उठाए हुए हाथ से पंचमुष्टि लुंचन करके मेरे पास आने के लिए बढ़ा किन्तु फिर विचार आया कि मेरे पास आने से उसे नियमानुसार उम्र में छोटे किन्तु दीक्षा में बड़े भाइयों को भी वंदन करना पड़ेगा। वह वहीं से ज्ञान प्राप्त के लिए तपस्या करने चला गया। इसी अभिमान के कारण बाहुबली को इतनी उग्र तपस्या करने पर भी केवलज्ञान की प्राप्ति नहीं हो रही है। अतः हे साध्वियो! तुम जाओ और उसे प्रतिबोध दो।

× × ×

बहुत खोज के बाद साध्वियों ने बाहुबली को पाया। जो दूर से एक ठूंठ की तरह खड़े दिख रहे थे। सारा शरीर पक्षियों का निवासस्थान बन गया था। सूर्य अपने प्रचंड तेज के साथ तप रहे थे। [illegible] साय साय [illegible] रही थी किन्तु मुनि अचल था, [illegible] अपनी तपस्या में [illegible]। उनकी घोर तपस्या को देख कर वे दंग रह गईं। [illegible] अभिमान के कारण यह घोर तपस्या [illegible] जा रहा है। [illegible] मुंह से निकल पड़ा—

[illegible]

आठ

मिलन

राजकुमार पवन अपनी आयुधशाला में बैठे नाना प्रकार के हथियारों की परीक्षा कर रहे थे। इस छोटी सी उम्र में इन्होंने हथियारों में कई सुधार किये। प्रयोग के अनेक नये ढंग भी निकाले। बड़े बड़े योद्धाओं को उन पर श्रद्धा थी। उनका अधिक समय इसी आयुधशाला में बीतता था। किन्तु आज रह रहकर उनकी दृष्टि द्वार पर चली जाती थी। उनका [illegible] मित्र प्रहस्त आज अब तक क्यों नहीं आया यही विचार उन्हें अशान्त बना रहा था। रात दिन सोना उठना सब एक ही साथ होता था। प्रहस्त थोड़ी देर के लिए भी अपने घर चला जाता तो राजकुमार स्वयं उसके घर पहुंच जाते। किन्तु जब से प्रहस्त का विवाह होगया तबसे पवन की बड़ी मुश्किल हो गई। उन्हें स्मरण हो उठा—जब प्रहस्त अपने घर जाने लगा तब पवन ने किसी तरह उसे अपने से अलग न होने देना चाहा। महाराज ने आकर समझाया—कुमार इसे घर जाने दो। तुम भी शीघ्र ब्याह किये आओगे तब अकेले न रहोगे। कुमार को यह अच्छा न लगा पर देखा अन्य कोई उपाय भी नहीं।

प्रहस्त ने मुसकराते हुए प्रवेश किया। राजकुमार से उसका आना छिपा न रहा फिर भी वे चुप रहे। उन्हें गुस्सा तो

इस बात का था कि वह इतनी देर तक घर रहा तो क्यों ?

प्रहस्त ने एक आध शब्द को इधर उधर हटा कर कहा—देखता हूं कुमार बहुत नाराज हैं किन्तु मैं तो एक बहुत अच्छी खुशखबरी लाया था।

कुमार ने प्रहस्त की तरफ बिना देखे ही कहा—देखता हूँ जब से भाभी आई हैं रात के अलावा अब दिन को भी गायब रहने लगे हो ?

तो इसका दंड मुझे क्यों मिले। पर अब तो मुझे शक है कहीं यही बात मुझे ही न कहनी पड़े—मंत्री-पुत्र ने मंद मंद मुसकराते हुए कहा।

उन्होंने घूमकर कहा—क्या मतलब ?

यही कि जो उलाहना आपने मुझे दिया है कहीं मुझे भी न देना पड़े। किन्तु खैर अभी तो मैं एक बहुत अच्छी खबर लाया था।

कुमार ने गंभीर बनते हुए कहा—किन्तु मैंने सुनाने के लिए मना नहीं कर रखा है।

किन्तु हां भी नहीं कहा। फिर जब तक उसके योग्य उपहार की घोषणा नहीं हो जाती तब तक वह सुनाई भी नहीं जा सकती।

कुमार हंस पड़े। हां यह बात पते की कही। पहले सुनाओ उपहार भी उसी हिसाब से मिल जायगा।

भारत की ... महेन्द्रपुर की लाड़ली राज दुलारी को हमारे ... प्राप्त हुआ है।

प्रद्युम्न की हँसी रुकती ही न थी।

कुमार का हृदय नाच उठा। उन्होंने हंसी को दबाते हुए कहा—यहां से महेन्द्रपुर कितनी दूर होगा ?

क्यों क्या राजकुमारी को अभी से देखने के लिए जी मचल उठा। हँसी प्रद्युम्न के चहरे पर अठखेलियां कर रही थी।

हां मित्र, पर यह कैसे संभव हो सकता है ? कुमार के स्वर में निराशा झलक रही थी।

यह मुझ पर छोड़ दीजिये। यह मेरा काम है। कल ही महाराज से सैर करने की आज्ञा लेकर गुप्त रूप से महेन्द्रपुर के लिए प्रयाण कर देंगे। आपका क्या ख्याल है ?

पवन ने प्रद्युम्न की पीठ ठोकते हुए कहा—शाबाश। इसीलिए तो महाराज ने तुम्हें मेरे मंत्रीत्व का पद दिया है। तब इसके लिये मुझे · · · ·

प्रद्युम्न बीच ही में बोला--आप निश्चिंत रहें मैं सब कर लूंगा।

× × × ×

अगर इसी तरह हम सारा समय शहर देखने में ही में बिता देंगे तो राजकुमारी को देखना कठिन हो जायगा क्योंकि उनका यही समय वाटिका विहार का है। आदित्यपुर भी लौटना आवश्यक है।

हां चलो। पर देखते हो नगर की बनावट कितनी सुन्दर है! इतना स्वच्छ कलापूर्ण शहर अभी तक मेरे देखने में नहीं

आया। जिसमें यहां की लम्बी चौड़ी सड़कें किनारे पर की वृक्षों की कतार तो और भी भली लगती है।

प्रहस्त ने भेद भरी मुसकराहट के साथ कहा—और थोड़ी देर में आप यह भी कहते सुने जायेंगे कि इतनी सुन्दर राजकुमारी तो मैंने आज तक नहीं देखी।

अच्छा अब आप पधारिये, पवन ने मुसकराते हुए कहा। यही तो राजकुमारी की विहारवाटिका दिखती है। देखिये न कितने कलापूर्ण ढंग से फूलों द्वारा यों अंजना-विहार-कुंज लिखा हुआ है। पर सावधान इन पहरेदारों से बचियेगा वरना कहीं इसी समय राजकुमारी के समक्ष मुलजिम होकर उपस्थित न होना पड़े।

अब शांत भी रहो। नूपुरों की मधुर झंकार भी सुन रहे हो? चलो पीछे की तरफ से चल कर देखें क्या रंग खिल रहा है। दोनों एक लता कुंज की ओट में खड़े होकर देखने लगे।

यह देखिये उस फूलोंवाले हिंडोल पर जो सुन्दरी झूले खा रही है वही राजकुमारी अंजना प्रतीत होती है।

इधर सुनो यह सुंदरी क्या कह रही है?

अंजना की प्रिय सखी वसन्त ला बोली—उफ आज तो बड़ी भयङ्कर गर्मी है। इस वाटिका में भी दम घुट रहा है।

चपला ने कहा—किन्तु हमारी राजकुमारी को अब गर्मी नहीं लगती। उनकी आंखों में ... खेल रही थी।

रागाने मुँह मटकाकर कहा—क्यों भला ?

चम्पा ने आश्चर्य प्रगट करते हुए कहा—अरे तू नहीं जानती अब हमारी राजकुमारी को इन पुंजय पवन की आवश्यकता नहीं। अब तो एक दूसरा ही पवन हृदय मन्दिर में बस चुका है हमारी राजकुमारी के।

किन्तु हमने तो सुना था कि हमारी राजकुमारी राजकुमार विद्युत्प्रभ के गले का हार बनेगी—मिश्रकेशी बोली।

तू किस दुनियां में रहती है। तू यह भी नहीं जानती कि ज्योतिषी महाराज के कारण यह सम्बन्ध रुक गया। क्यों कि उनके कथनानुसार कुमार की उम्र बहुत ही अल्प है और उनके शास्त्र के अनुसार छोटी उम्र में ही कुमार के जोगी बनने का योग है। भला हमारी राजकुमारी को जोग थोड़े ही रमना है। क्यों राजकुमारीजी, चम्पा ने हंसी को दबाते हुए पूछा।

अंजना ने झूमते हुए कहा—धन्य है उस राजकुमार को जो छोटी सी उम्र में ही साधुत्व ग्रहण करेंगे। इतने भाग्य मेरे कहां कि ······

पवन इतना सुनते ही आग बबूला हो गए। उनका तेजस्वी मुख क्रोध से लाल हो गया। उन्होंने कहा—सुनते हो प्रहस्त इनकी बातें। चलो शीघ्र चलो, अब मैं यहां एक क्षण भी ठहरना नहीं चाहता। मेरा दम घुट रहा है। ऊपर से जितनी भली दिखती है अन्दर से उतनी ही खराब है। [illegible] ऐसी कन्या न [illegible] की।

मंत्रीपुत्र प्रहस्त चकरा गया। उसने अपने को सम्हा-
लते हुए कहा—राजकुमार! ऐसा न कहिये। राजकुमारी के
प्रति आपका यह विचार उचित नहीं। आप कहें तो मैं [illegible]
दिन यहीं ठहर जाऊँ और

नहीं, उत्तेजित पवन बोले—इसकी कोई आवश्यकता नहीं।

प्रहस्त ने कुछ विस्मय के साथ कहा—जरा सोच समझ कर
किसी प्रकार का निर्णय कीजिये। [illegible] संभव है.........

पवन—जानता हूं। चलो—यहां से जितनी जल्दी हो सके।
मेरा दम घुट रहा है। कुमार के हृदय में प्रतिशोध की भावना
प्रबल हो उठी।

× × × ×

कुमार यदि आज्ञा दें तो आज की रात बिताने के लिये पड़ाव
यहीं पर डाल दिया जाय। मंत्रीपुत्र प्रहस्त ने अपने नये सेना-
पति पद की जिम्मेवारी समझते हुए कहा।

राजकुमार पवन कुछ गम्भीर होकर बोले—अभी से ही थकावट
महसूस करने लगे। हमें बहुत जल्दी पहुंचना है। पड़ाव
आगे डालना ही ठीक रहेगा।

किन्तु इधर नजदीक [illegible]
सरोवर का रमणीय तट [illegible] हृदय को लुभाने वाला है

हां ठीक है यहीं पर पड़ाव डाल दो। पवन ने [illegible] सोच कर
कहा।

मंत्रीपुत्र से यह छिपा न रहा कि कुमार किस चिन्ता में व्यस्त है। उसने कहा—कुमार आज मैं आपको बहुत दुःखी और खिन्न देख रहा हूं। क्या मामा का वियोग . ...

बात काट कर कुमार बोले—क्यों जलाते हो। तुम तो जानते ही हो कि आज शादी हुए एक दो नहीं किन्तु बारह वर्ष हो गये हैं। किन्तु मैंने आंख उठा कर भी उस तरफ नहीं देखा। उसके सम्बन्ध में सोचना भी पाप समझता हूँ। अच्छा अब तुम जाओ आराम करो। हमें भी आराम की जरूरत है। कहने को तो पवन कह गये पर उनकी आँखों में नींद कहाँ। जिन विचारों से वर्षों दूर भागते रहे आज युद्धस्थल में जाते समय वे ही विचार सताने लगे। जिसके विषय में सोचना भी पाप समझते थे आज उसी की मूर्ति आंखों में तैर रही थी। अनेक विचार आये, अनेक दृश्य सजीव हो उठे। वे सोचने लगे जब उन्हें इस राजकुमारी पर रोष था तब उन्होंने उसके साथ शादी ही क्यों की? क्यों न इन्कार कर दिया। क्या यह दंड देना उन्हें उचित था? शक मात्र से क्या उसे छोड़ देना उनके लिए ठीक था? क्या कभी इसका सबूत मांगा? कुमार बिस्तर पर से उठकर बाहर आए, देखा सारी दुनिया सो रहा है। चांदनी रात थी। कुमार [illegible] [illegible] [illegible] दूर भागे, [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] की दुनिया से [illegible] [illegible] [illegible] करुण आवाज सुनाई [illegible] कुमार [illegible]

[illegible]

अंजना ने साश्चर्य कहा—पागल तो नहीं होगई वसन्तमाला ! यह तुम्हें इस समय क्या सूझी है वे यहां हैं कहां ? वे युद्ध भूमि में कहीं व्यूहरचना का आयोजन कर रहे होंगे।

लो देखो, ये सामने ही आ रहे हैं न !

अंजना ने देखा। उसका हृदय उछला। शरीर में कंप आया। वर्षों की आशा पूरी होने का अचानक सुयोग। वह सह न सकी। उसको देह का भान भूल गया। वह अचेत सी गिरी। वसंतमाला ने दौड़ कर उसे सहारा दिया।

कुमार अपनी सुन्दरी प्रिया से मिलने आये थे। नूपुर और मंजीरों की झंकार सुनने को कातर उनके कान लज्जित सौंदर्य को निहारने को व्यग्र उनकी आंखों में निराशा छा गई। उन्होंने एक तपस्विनी क्षीणवदना को वसंतमाला की गोद में देखा।

वसंतमाला ने कहा—स्वामिन आपके वियोग ने स्वामिनी का यह हाल कर दिया है।

अंजना—यह मान रहा था कभी यह [illegible] न कहीं [illegible] रही है। उसकी [illegible] लुप्त सा होगया [illegible] नहीं [illegible] है उसे [illegible] महान हृदय [illegible]

पावन चरणों को नहीं छोड़ूंगी। उसे हृदय में नहीं इन चरणों में ही स्थान दे दो। आगे बढ़े इससे पहले ही फिर मूर्च्छित हो गिर पड़ी।

अंजना की आंखें खुली तब उसने देखा उसका मस्तक पवन की जांघों पर पड़ा है और उसके रेशमी काले बालों में किसी की उलझी अंगुलियां चल रही हैं। कितने सुखमय क्षण हैं। इसी अवस्था में वह सो जाय सदा के लिए। इस निरापद स्थान में उसे कोई चिन्ता नहीं कोई भय नहीं। उसने अध खुली आंखों से जी भरकर अपने जीवन को देखा। यह विचार आते ही कि कहीं आंख खुलते ही उसका यह सुखद स्वर्गीय आनन्द लुप्त न हो जाय उसने जोर से अपने नयन मूंद लिये।

कुमार ने अत्यन्त मृदुल स्वर में कहा—अंजना मेरी अंजना, मुझे क्षमा कर दो। मैं बहुत लज्जित हूं मैं दुखी हूं।

अंजना गद्गद् होगई। वह रुद्ध कंठ से बोली—ऐसा न कहो प्रभु। इस अपराधिनी ने आपको [illegible] कष्ट नहीं दिए। आज मेरे अहोभाग्य है कि आपके चरण [illegible] इस कुटिया में पड़े। मैं किस मुंह से अपने [illegible]।

पवन ने [illegible] कहा—[illegible] ऐसी भावना न करो। मैंने [illegible] तुमने [illegible] अग्नि सहन हुए भी [illegible] आज [illegible] में एक पक्ष ने मेरा [illegible] किन्तु [illegible] नहीं [illegible] मैंने

तुम्हें क्यों त्यागा ? तुमने ऐसा कौनसा अपराध किया जिससे इतना बड़ा दंड तुम्हें मिला।

अंजना ने कहा—मुझे कुछ नहीं पूछना है। नहीं आपसे कोई शिकायत है। मैं तो सिर्फ यही चाहती हूं कि इसी तरह आपकी चरणचेरी बनी रहूं।

पवन ने सोचा—अहो ! इसका हृदय कितना महान है। उस समय भी इसने इसी महानता का परिचय दिया। मेरे कितने ओछे विचार थे। मैंने कितनी बड़ी भूल कर डाली। वे बोल उठे तुम साक्षात् देवी हो अंजना। तुम धन्य हो। पवन ने आज तक विजय ही प्राप्त की है। उसने किसी से हार नहीं खाई किन्तु आज हार कर भी गर्व अनुभव हो रहा है। इस पराजय में भी विजय पताका दिख रही है।

इस तरह सुन्दरी की तपस्या सफल हुई। उसके असाध्य धैर्य और त्याग ने उसे सतियों की पंक्ति में बिठा दिया। हनुमान जैसे वीर रत्न पैदा कर उसने युग युग के लिए भारत को अपना ऋणी बना लिया।

★

किन्तु उस पर भी विषैला प्रभाव पड़े बिना नहीं रहता। अतः कृपा करके आप इस मार्ग से न जाकर हम बतायें उस मार्ग से ही जायें।

धन्यवाद! बालसखा! तुमने मुझे इस मार्ग की भयंकरता बता कर अपने कर्तव्य का पालन किया किन्तु अब मुझे भी अपने कर्तव्य का पालन करना है। केवल भयंकरता के कारण मैं इस पथ को नहीं छोड़ सकता। मैं अपनी भरसक चेष्टा से उस विषधर को शांत करूंगा। उसकी शक्ति का इस तरह दुरुपयोग नहीं होने दूंगा।

लड़कों को बहुत अचरज हुआ। कैसा विचित्र तपस्वी है यह! यह स्वयं विषधर का ग्रास बनने जा रहा है। वे बोले—महाराज हमने तो आपके भले के लिए ही कहा है परन्तु यदि आपको मरना ही प्रिय है तो जाइये। हम क्या कर सकते हैं।

साधु और कोई नहीं [illegible] महावीर थे। [illegible] में दया का स्रोत बह रहा था। [illegible] का उद्धार करना था [illegible] प्रभु [illegible]

इस बार का लिपटना पश्चात्ताप और करुणा का लिपटना था। उसके मुंह का विष अमृत हो कर बह चला। चारों ओर वन और वनस्थली में हरियाली और वसंत की दुनियां हंसने लगी।

प्रभु ने आशीर्वाद दिया—चण्डकौशिक तुम्हारा विष जैसा विकराल था तुम्हारा पश्चात्ताप भी वैसा ही प्रभावक है। तुम धन्य हो। मुंह उठाकर देखो अपनी नई सृष्टि को। वह क्षण भर में कैसा मोहक बन गई है!

चंडकौशिक ने आश्चर्य से अपने चारों ओर नजर डाली और कहा—यह सब प्रभु महावीर की निर्भयिनी करुणा और अहिंसा का प्रसाद है जिसने मेरे जीवन वृक्ष को पुण्य के प्रसून से पुष्पित किया है।

*

पश्चात्ताप

महा साध्वी राजमती अपनी साध्वियों के साथ गिरनार के ऊंचे र्वत पर अपने आराध्य देव भगवान अरिष्टनेमि के दर्शन करने ई। अभी वे कुछ दूर ऊपर चढ़ भी नही पाई थी कि मंद मंद हवा ने आंधी का उग्र रूप धारण कर लिया। आंधी के साथ साथ नघोर काले बादल बड़ी २ बूंदों के रूप में बरसने लगे। अंधकार तना घना हो गया कि हाथ को हाथ दिखना कठिन हो गया। क्षण र साध्वी विचार में पड़ गई। क्या वापिस लौट जाय किन्तु नही यह कैसे हो सकता है। उसे विपत्ति से घबराकर पीछे नही हटना चाहिये। वह अपने लक्ष्य की ओर बढ़ने लगी। किन्तु वह जिस साहस के साथ आगे बढ़ रही थी। हवा के उग्र झोंके कहीं अधिक बल वेग से उसे पीछे धकेल रहे थे। साध्वी के पैर लड़खड़ाने लगे म्बे संघर्ष के पश्चात साध्वी को रुक जाना ही श्रेष्ठ जान पड़ा। उसके वस्त्र एक दम भीग गये। साथ की साध्वियां का साथ छूट या। साध्वी धीरे धीरे नीचे उतरी और पास ही की एक गुफा में स्त्र सुखाने के लिए चली गई। अपने भीगे वस्त्र खोल कर फैलाये ी थे कि उसे कुछ आहट सुनाई दी। साध्वी ने चौंक कर देखा उसे अस्पष्ट मानव छाया सी दिख रही। [illegible] नीचे से पर तक सिहर उठा। मानो मही को [illegible] में [illegible]

हो। उसका रोम रोम सजग उठा। निर्जन स्थान और वह भी इस नाजुक अवस्था में, अब क्या होगा साध्वी विचार में पड़ गई। किन्तु उसी समय उसे ऐसा प्रतीत हुआ मानो कोई कह रहा है — सखी को भय कैसा? वह एक वीर क्षत्री की पुत्री है। उसने एक बार पीयूष दुग्ध पिया है। वह मौत से डरे? मौत से भय तो कायर और दुर्बलों को होता है। सतीत्व की रक्षा के लिये प्राण की बाजी भी लगती है आज ही तो परीक्षा देने का अवसर आया है। उसी समय सखी मर्कटासन लगा कर बैठ गई। आने वाली विपत्ति का मुकाबला करने के लिये।

गुफा में अंधेरा होने के कारण साध्वी उस पुरुष को नहीं देख सकी थी। किन्तु मोहातुर रथनेमि की आंखों से राजमती छिपी न रही। राजमती को देखते ही उसकी सोयी भावनाएं जाग उठीं। एक एक करके सारे दृश्य स्मरण हो उठे। राजमती द्वारा उसका त्याग राजमती को अपनी बनाने के लिये भेजे हुए दूत का तिरस्कार और अन्त में यह मोहातुरता।

रथनेमि कुछ आगे बढ़े और बोले—देवी आओ। निर्भीक होकर आगे बढ़ो। यहाँ पर तुम्हें किसी प्रकार का भय करने की आवश्यकता नहीं। मैं और कोई नहीं तुम्हारा चिरपरिचित अनन्य उपासक रथनेमि हूँ। पुरानी बातें स्मरण कर गड़े मुर्दे उखाड़ने से क्या लाभ? आओ आज से हम नया जीवन प्रारम्भ करें। इस एकान्त स्थान में इस तरह गुमसुम क्यों बैठी हो। मेरे रहते तुम्हें किसी

प्रकार का विचार या भय न करना चाहिये। कितना सुन्दर और सुहावना समय है। बादल बरस कर थक चुके हैं। इन्द्रधनुष ने अपनी रंगीली छटा छा दी है। बादल उससे फाग खेलने में मस्त हैं। हवा के ये मादक झोंके रग रग में नव जीवन का संचार कर रहे हैं। सारी प्रकृति मतवाली हो रही है। अब और दूर न रहो राजुल आओ हम तुम एकाकार होकर इन क्षणों को अमर करदें। वियोग की इन घड़ियों को अब और अधिक न बढ़ाओ। मेरे बुझे दीप को प्रज्वलित करदो देवी हृदय की ज्वाला को शांत करना केवल तुम्हारे ही हाथ है। बहुत दिन तक तुम्हारा वियोग सहा किन्तु अब नहीं सहा जाता तुम्हारा वियोग।

साध्वी को यह जान कर बहुत संतोष हुआ कि यह और कोई नहीं प्रभु के लघु भ्राता रथनेमि हैं जो कुविचार के वशीभूत होकर ये पुनः अपनी सुध बुध भूल गए किन्तु फिर भी कुलीन हैं समझाने पर सही रास्ते पर आजावेंगे। वह तत्काल मर्कटासन लगाकर जल्दी जल्दी वस्त्र पहनने लगी।

रथनेमि धीरे धीरे आगे बढ़ कर विनय के स्वर में कहने लगे- देवी ! यह समय सोच विचार करने का नहीं। मेरी चिर दिनों की अभिलाषा को पूर्ण करके मुझे मनस्ताप से बचा लो। मेरी अर्चना को स्वीकार करो देवी ! आज मैं तुम्हारी एक भी आना कानी नहीं सुनूंगा।

इस अर्से में साध्वी भी अपने वस्त्र पहन चुकी थी। वह अत्यन्त मधुर स्वर में बोली—रथनेमि आप साधु हैं। आपको इस तरह

यह तुम क्या कह रही हो देवी ? यह भी कोई पूछने की बात है कहीं ऐसा भी होता है ? वमन किया हुआ पदार्थ भी वह. ग्रहण किया जाता है मनुष्य तो कभी ऐसा सोच भी नहीं सकता।

साध्वी को अपना तीर निशाने पर लगा जान कर कुछ आशा बंधी। उसने उत्साह के साथ कहा–जिस गृहस्थ धर्म को जंजाल भूठा सार-हीन समझ कर त्याग दिया था उसी में पुनः प्रवेश करने की कामना करना और वह भी एक ऐसी स्त्री के साथ जो हमी के बड़े भ्राता की पत्नी हो चुकी है क्या वमन किए हुए को ग्रहण करने से भी बदतर नहीं ? इससे अधिक निकृष्ट भावना और क्या हो सकती है ? दुनिया आपको किस नाम से याद करेगी ? आने वाली पीढ़ी क्या सोचेगी ? ओह ! क्या हम धिक्कार को लेकर जी सकेंगे। क्या आप यह भी भूल गये—

> कम्मसगेहिसम्मूढा, दुक्खिया बहुवेयणा ।
> अमाणुसासु जोणीसु, विणिहम्मन्ति पाणिणो ।

अर्थात्—जो प्राणी काम वासनाओं से विमूढ़ हैं, वे भयंकर दुःख तथा वेदना भोगते हुए चिर काल तक मनुष्येतर योनियों में भटकते रहते हैं।

रथनेमि का सिर चकराने लगा। उन्हें दुनिया घूमती सी नज़र आई। भविष्य के परिणामों ने उनकी उत्तेजना को क्षण भर में समूल नष्ट कर दिया। साधु, और साध्वी से प्रेम की भीख मांगे। उनका मुख म्लान हो गया। उनका वही साधुत्व पुन जागृत हो उठा। सा ध्वी मुझे क्षमा कर' मुझ [illegible] का कुछ भी ज्ञान नहीं रहा था।

इग्यारह

मुक्ति के पथ पर

राजगिरि नगरी के पनघट पर पनिहारियों ने कुछ उदास सौदागरों को बैठे देखा। सेठानी भद्रा की दासियों ने भी उन्हें देखा। वे द्रवित हो गईं। राजगिरि के श्रेष्ठी शालिभद्र की वे परिचारिकाएं। उन्होंने परस्पर चर्चा की क्या कहेंगे ये परदेशी। सहानुभूति जताते हुए उन्होंने पूछा—क्यों भाई, इस तरह उदास क्यों बैठे हो ? ऐसी कौन सी बात होगई ?

निराशा के स्वर में सौदागर बोला—नाम बड़े और दर्शन खोटे। हम लोग बड़ी दूर नेपाल से बहुमूल्य रत्न कम्बलें लेकर आये थे किन्तु जब यहाँ के महाराज श्रेणिक तक एक भी कम्बल नहीं खरीद सके तो दूसरा कौन उन्हें ले। हमारा तो यहाँ आना ही व्यर्थ हुआ।

सहास्य उत्तर मिला—ओह छोटी सी बात के लिये इतनी परेशानी। उठो हमारे साथ चलो। अगर पसन्द आगई तो हमारी सेठानीजी तुम्हारी सारी कम्बलें खरीद लेंगी, पर यह तो बताओ बदले में हमें क्या मिलेगा ?

निराश सौदागर ने मुसकराने की चेष्टा करते हुए कहा—तुम जो कुछ कहोगी तुम्हें वही मिल जायगा सुन्दरियो !

अच्छा अच्छा। रहने दो अपनी खुशामद। अब तो बड़े वाचाल हो गये हो तुम लोग। कुछ समय पहले तो मुँह से बात भी नहीं निकलती थी। खैर, फिर कभी आओ तो ऐसी ही कम्बलें हमारी सेठानीजी के लिए और लाना। देखो भूलना मत।

किन्तु यह तो हमारे ही हित की बात हुई सुन्दरी! तुम्हें हमारा कितना ख्याल है। इसके लिए हम सब तुम लोगों को हार्दिक धन्यवाद देते हैं।

अच्छा स्वीकार है। हंसती हुई दासियों ने परदेशी व्यापारियों को विदा दी।

× × × ×

सुबह का समय था। मेहतरानी स्नानघर साफ करने आई तो क्या देखती है कि रत्न कम्बलों के बत्तीस टुकड़े पड़े हैं। स्नानागार उनकी छटा से जगमगा रहा है। मेहतरानी की हिम्मत न हुई कि उन्हें छुए। उसने आवाज दी ये कपड़े समेट लो बहूजी। किसने बिखेर दिये हैं? उत्तर मिला—तुम ले जाओ। मेहतरानी चकराई। उसे विश्वास न हुआ। कितनी ही देर चित्रलिखी सी खड़ी रहने के पश्चात् धीरे धीरे रत्न कम्बलों को बटोर कर ले गई।

दूसरे दिन प्रातःकाल राजगिर की महारानी ने अपनी भगन

सोच विचार में रहो उसने बहुत तरह से सोचा पर माजरा कुछ भी समझ में नहीं आया।

राजा श्रेणिक को जब पता चला कि महारानी कोप भवन में है तो तुरत वहां गये। प्रश्न पर प्रश्न किये पर उत्तर न मिला। आखिर अत्यन्त आग्रह करने पर रानी ने यह कहते हुए अपनी मौन भग की और कहा—मैं क्या रानी हूं ! आप मुझे रानी कह कर चिढ़ाना छोड़ दीजिये।

राजा चकित होकर बोले—यह तुम क्या कह रही हो। क्या मैं कभी अपनी प्रियतमा के साथ इतना अन्याय कर सकता हूं। तुम्हें यह ख्याल कैसे आया। मुझ से साफ साफ कहो। मेरा हृदय शीघ्र सुनने के लिये विकल हो रहा है।

मैं क्या कहूं ? आप अपनी रानी के लिये एक कम्बल भी नहीं खरीद सकते जब कि आपकी प्रजा में से सेठानी भद्रा की पुत्रवधुएं उन्हें पैर पोंछने में काम ले सकती हैं।

पैर पोंछने के लिए रत्न कम्बलें महाराज ने विस्मित होते हुए कहा।

हां महाराज ! इन्हीं आंखों ने देखा है भगन के पास जो उसे सेठानीजी के यहाँ से मिली है।

महाराज को विश्वास नहीं हो सका, पर महारानी पर अविश्वास भी कैसे करें। उन्होंने कहा—मैं स्वयं अभी इसका पता लगाऊंगा।

भद्रा ने अपने भंडारी को इशारा किया। फिर क्या था बहुत सी बहुमूल्य अंगूठियाँ आ गईं। भंडारी ने नम्रता से कहा—श्रीमान् को जो पसन्द हो ले लें। महाराज लज्जित हो गये। उन्होंने कहा—नहीं मैं तो पत्थरों का निरीक्षण कर रहा था। अब और अधिक मैं न यह सकूंगा। कष्ट न हो तो कुमार को यहीं बुला लो।

भद्रा ने पुकारा—बेटा। नीचे आओ, देखो तुम्हारे आंगन में नाथ पधारे हैं।

उत्तर मिला—खरीद कर भंडार में डाल दें। मैं कुछ नहीं जानता। मुनीमजी से कहें। पर आश्चर्य है ऐसी मामूली बातों के विषय में पहले आपने कभी नहीं पूछा।

कोई सौदागर नहीं बेटा! स्वयं हमारे यहाँ नाथ पधारे हैं। वे तुम्हें देखना चाहते हैं।

नाथ! मेरे भी कोई नाथ है! यह क्या बात! इतने दिन वे कहाँ थे? आश्चर्य चकित शालिभद्र नीचे उतरा।

महाराज ने प्रेम से कुमार को अपने पास बिठाया। उनके के श्रम से कुमार थक गये। उनका कोमल गात मुरझा गया। आनन्दित मुख म्लान हो गया।

अब उसको मन [illegible] महल में रहना असह्य हो गया। [illegible]

अनुगमन

यह उस समय की बात है जब आज कल की तरह लोगों को मनोरंजन के साधन हर समय उपलब्ध नहीं होते थे। रेल और मोटर की भक भक और भों भों नहीं थी। एक से दूसरे शहर को जाने में महीनों लग जाते थे। नाटक मंडलियां बरसों बाद आती थी। आज भी चिर प्रतीक्षा के बाद एक प्रसिद्ध नाटक मंडली ने आकर अपने डेरे डाले। उसे देखने शहर के अमीर गरीब बाल वृद्ध सब उमड़ पड़े थे। शहर के छोटे बड़े हर एक के मुंह पर उस मंडली की चर्चा थी।

लोगों ने देखा और दांतों तले उंगली दबा ली। बूढ़ों ने सफेद बालों को दुलारते हुए कहा—हमने अपनी उम्र में ऐसा सुन्दर नाटक कभी नहीं देखा। कितने साहस का काम था। और जैसे सीधे स्तम्भ पर काम करना उन्हीं का काम था। सब लोगों ने देखा, प्रशंसा की और चल दिए अपने अपने घर की ओर किन्तु उस भीड़ में का एक कुमार बैठा ही रहा। चांदी के सिक्कों को बटोर कर और अपने खेल के समान को बांध कर नट मंडली भी जब चलने लगी तब विचार मग्न कुमार की नींद खुली। नटों का काम सुन्दर था पर नटी का उससे भी कहीं अधिक सुन्दर और दक्षतापूर्ण। वह मृगनयना कितनी फुर्ती से अपना

रहे छिपे नहीं थे। [illegible] [illegible] [illegible] से पूर्ण पहला था। [illegible] की [illegible] किसी प्रकार छूट जाता किन्तु आँख की प्यासी रह जाती। उस समय में कितना सौन्दर्य था। उसकी नशीली आँखों की मादकता भरी तिरछी नजर के खींचे हुए बाण हृदय को बींध रहे थे। गुलाबी वर्ण से निखरी देहयष्टि और उसकी मधुर मन्द भरी मुस्कान! सुन्दरी के नयनों में कुमार उलझ जाना चाहता था। चाहता था सदैव भुजपाशों में खो जाना सदा के लिए। पर यह क्या संभव हो सकता है यह नट और मैं वणिक। किन्तु इससे क्या प्रेम मार्ग में कोई भी अपना रोड़ा नहीं अटका सकता। तो क्या मैं इसके सम्मुख अपना प्रस्ताव रक्खूं? किन्तु नहीं इससे पूर्व पिता जी से पूछ लेना आवश्यक है। यदि उन्होंने इन्कार किया तो, तो क्या परिणाम होगा? उपेक्षा और इसका मतलब सम्पत्ति से वंचित और गृह-त्याग हुआ करे यह संभव है किन्तु उसे त्यागना असंभव है उसके लिए इससे कठिन उत्सर्ग करने के लिए वह तैयार है सदैव। इन्हीं विचारों में उलझा हुआ कुमार घर पहुँचा।

सेठजी ने सुना, और सुनते ही दंग रह गये। उन्हें अपने कानों पर विश्वास न हुआ। उनके कान ऐसी बात सुनने के आदी न थे। उन्होंने फिर पूछा—क्या कहते हो कुमार?

पिताजी मेरा यह

यदि तुम कहो तो उससे कहीं अधिक सुन्दर और

कुमारी से तुम्हारा विवाह कर दूं।

आपकी दया। पर यह मेरा अन्तिम निर्णय है। मुझे दुख है कि मैं आपको ....

शांत हो जाओ बेटा! तुम्हारा दोष नहीं। यह जवानी जब आती है तो इसी तरह आती है।

पिताजी .....

जाओ बेटा जाकर सो जाओ। सुबह तक इस विचार को त्याग कर ही मुझे मुंह दिखाना। इससे अधिक और कुछ भी मैं सुनना नहीं चाहता। कुमार इस तरह की निलज्जता की आशा मुझे तुम से न थी। वणिकों का नटों से सम्बन्ध जोड़ना असम्भव है। जाओ बूढ़े बाप के इन मेरे संकेतों का ध्यान रखना।

जाओ, जाओ, जाओ। जाते क्यों नहीं कुमार पिता का निर्णय प्रत्यक्ष है। और कुमार ने नट मंडली के निवास स्थान पर जाकर सांस ली। कुमार को आया जान नाटक नेता ने बहुत ही नम्र भाव से कहा पधारिये श्रीमान्, कहिये मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूं।

मैं तुम्हारी लड़की से शादी करना चाहता हूं झेंपते हुए कुमार ने अत्यन्त क्षीण स्वर में कहा।

किन्तु मैं इसके लिए तैयार नहीं हूं।

उसके बाद आपको हमारे साथ साथ रहकर हमारी नट कला का काम सीखना होगा । उसके पश्चात् जब आप पूर्ण निपुण हो जायेंगे तब मैं आपकी इच्छा पूरी कर सकता हूं । बशर्ते कि आप काफी धन भी पैदा करके ले आयें ।

कुमार ने उत्साहित होते हुए कहा— इसके लिए मैं तैयार हूं नटी के सामने कुमार हर एक त्याग को तुच्छ समझता था ।

समय जाते हुए देर नहीं लगती । समय के साथ कुमार भी नट विद्या में निपुण हो गया । एक लगन थी । उसको नट विद्या के काम में इतना अच्छा अभ्यास हो गया कि दर्शक ही क्यों उसके गुरु भी आश्चर्य चकित हो जाते थे । आज कुमार की अंतिम परीक्षा थी । बैनातट के राजा और प्रजा के सामने सारा खचाखच भरा हुआ था । उसके सामने अपनी उत्तम से उत्तम कला दिखा कर इतना धन प्राप्त करना था जिससे उसका भावी श्वसुर संतुष्ट हो जाय । उसका हृदय धुक धुक कर रहा था । आज वह अपनी सारी निपुणता दिखा देना चाहता था । भावी सुन्दर कल्पना ने उसे विभोर कर दिया था । उसने अत्यन्त उत्साहित हो कर अपने खेल दिखाने शुरू किये । सारे दर्शक मूक भाव से देखते रहे । वे उसमें इतने रीझ गये कि उन्हें समय का ज्ञान ही न रहा । उनकी नींद तब खुली जब उसने बांस से नीचे उतर कर एक आशाभरी दृष्टि राजा पर डाल दी [illegible]

अपने २ डेरों में चले गये किन्तु राजा से पूर्व मंत्री उनके पास पहुँचा था। वे महाराज के उपहार देने की प्रतीक्षा ही में थे कि मंत्री ने कहा—हे नट ! यद्यपि तुमने अद्भुत सुन्दर कार्य किया है किन्तु महाराज का ध्यान दूसरी ओर था अतः एक बार फिर अपनी कला को दिखाओ। ऐसी महाराज की इच्छा है। दर्शकों ने ताली बजा कर इस बात का अनुमोदन किया। उनका हृदय आनन्द से भर गया। इस चमत्कार पूर्ण दृश्य को देखने का अवसर पुनः एक बार और मिलेगा फिर भला हृदय क्यों न नाचे।

नट ने सुना और चल कर खड़ा हो गया। किन्तु सुन्दरी नटी के ध्यान आते ही दूने उत्साह से फिर अपनी कला दिखाने लगा किन्तु यह क्या! इस बार भी मंत्री की वही बात सुनाई दी। नट निराश होकर बैठ गया। दर्शकों में भी हलचल मच गई। तुम्हारा खेल ध्यान से देख कर तुम्हें उचित पुरस्कार दिया जायगा। किन्तु क्यों बार बार महाराज का ध्यान नहीं रहता यह बात किसी से छिपी न रही। महाराज का चरित्र किसी से छिपा न था। नट फिर पड़े अपनी कला दिखाता [illegible] और राजा के हाथ [illegible] वह अपूर्व सुन्दरी नटी। नट ने [illegible] से काम करने से इन्कार कर दिया। नटी ने [illegible] एक बार और कार्य करें [illegible] ने उसने कार्य करना शुरू किया [illegible] हाथ [illegible] निर्दय [illegible] रहे थे [illegible] एक

बाहुबली को ढूंढने की चेष्टा की। उनकी बहनें ब्राह्मी और सुन्दरी ने भी उन्हें उसी स्थान पर खोजा पर वे वहां न मिले। हां जिस स्थान पर वे ध्यानस्थ मग्न हुए थे वहां पर उन्हें लताओं से आच्छादित धूल तथा जालों से ढका हुआ ठूंठ की तरह लम्बा अचल कुछ दिखाई अवश्य दिया। शायद इसी के नीचे वह ध्यानी ध्यानस्थ अपने शत्रु का दमन करने में संलग्न था पर ब्राह्मी और सुन्दरी उन्हें ढूंढ सकीं या नहीं यह कोई नहीं कह सकता, और कहां तक उन्होंने अपने शत्रु पर विजय प्राप्त की यह भी जगत के लोगों को अविदित ही रहा। किन्तु यह ध्वनि वहां आज भी सुनाई देती है। —

अप्पा चेव दमेयव्वो अप्पा हु खलु दुद्दमो।
अप्पा दन्तो सुही होइ, अस्सिं लोए परत्थ य॥

अर्थात्—अपने आप को ही दमन करना चाहिये। वास्तव में अपने आपको दमन करना ही कठिन है अपने आपको दमन करने वाला इस लोक में तथा परलोक में सुखी होता है।

★

सुभद्रा ने चटपट अपनी आँखें पोंछकर हंसने की चेष्टा करते हुए कहा—कुछ नहीं नाथ, यों ही कोई खास बात नहीं।

युवा पुरुष मुसकराये और कहा—खास नहीं तो साधारण ही सही पर क्या हुआ मेरी रानी को और उसे अपनी ओर खींच लिया।

सुभद्रा जरा सहमती हुई बोली—यों ही जरा भैया का ख्याल आ गया। इतनी बड़ी सम्पत्ति को कुटुम्ब को त्याग कर साधु बनने जा रहे हैं। माताजी, भाभियां ... ...

सुभद्रा और भी कुछ कहे उसके पहले ही आश्चर्य युवा ने पूछा कब ?

सुभद्रा—बत्तीसों भाभियों को क्रमशः एक एक दिन समझा कर फिर दीक्षित होंगे।

युवा ने मुसकराते हुए चिढ़ाने के स्वर में कहा—तो तुम्हारे प्रिय बन्धु साधु बन रहे हैं। पर आश्चर्य इस तरह मुलहित आदमी क्या लेंगे दीक्षा। जिन्हें एक महीना तो स्त्रियों को समझाने में ही लग जायगा।

इस कुटिल कटाक्ष ने सुन्दरी के हृदय में क्रोधानल धधका दिया। उसे ऐसा लगा मानों सैकड़ों बिच्छुओं ने एक साथ उसके अन्तस्तल पर डंक प्रहार किया हो। अपने प्रिय बन्धु का अपमान और वह भी अपना मौता के सामने। उसके कपोलों

उठ खड़ा हुआ। सुभद्रा चकित सी खड़ी रह गई।

आठों सुन्दरियों के मुख मुर्झा गए। उन्हें पृथ्वी घूमती लगी। उनकी बुद्धि बेकार सी हो गई। सुभद्रा ने स्वस्थ कर कहा—नाथ आप क्या कह रहे हैं ? हसी मखौल को पर इतने नाराज होगए। हमें क्षमा कर दें।

युवा ने कहा—तुम्हारे लिये निश्चय ही यह हसी रही किन्तु मुझे इसमें तुमने एक महान् पथ दिखा दिया है सुभ तुम्हारी इस हंसी में मेरी मुक्ति निहित है। इस उपकार मैं जीवन भर नही भूलूंगा। अच्छा अलविदा। और वह नि कर चल दिया।

सुभद्रा को अपनी जीभ खींच लेने की इच्छा हुई। उसने क कंठ से रोक कर कहा—नाथ ! हमारी क्या गति होगी ? पर तरस नहीं आता तो इन सातों का तो विचार कीजिये कसूर मेरा है दंड मुझे मिलना चाहिये। हम आप के वि कैसे जियेंगी सब एक साथ बोल उठी। उनके स्वरों में कम्पन था

चलता चलता युवक रुका और पीछे मुड़ कर कहा—किसी अपराध नहीं। तुम्हारा भी नहीं सुभद्रे ! अब रही तुम लोग की बात सो अगर इच्छा हो तो तुम भी उसी उत्तम मार्ग अनुसरण कर सकती हो। इस मायावी संसार से मुक्ति सकती हो। बोलो अगर इच्छा हो तो आओ मुक्ति भी साथ साथ प्राप्त करें।

सेठ दरबार में हाजिर किया गया। महाराज ने पूछा सेठ तुम मेरी नगरी में सब से अधिक धर्मात्मा माने जाते थे। तुम इस नगरी के नगर सेठ थे फिर तुम्हारा यह हाल कैसे हुआ। तुम्हारी इतनी हिम्मत कैसे हुई। जवाब दो।

सेठ मौन रहे। उन्होंने विचार किया अगर मैं अपनी सफाई दूंगा तो राजमाता पर कलंक का टीका लगेगा। इससे मेरे देश की बदनामी होगी, मातृत्व लजाएगा। नहीं नहीं मैं राजमाता पर आंच भी न आने दूंगा चाहे इसके लिए मुझे कितना ही बड़ा दंड क्यों न मिले। वे मौन ही रहे।

सेठ की मौन राजा तथा दरबारियों के लिए असह्य हो गई। वे बोले जानते हो सेठ मौन का मतलब अपने पाप की स्वीकृति और उसका दंड मौत से कम नहीं।

किन्तु फिर भी मौन भग न हुई। हुक्म हुआ उसे ले जाकर अभी तुरन्त शूली पर चढ़ा दो। ऐसे पापी के लिए यह सजा भी कम है।

चम्पावासियों ने जब यह आज्ञा सुनी तो दंग रह गये। एक हल्ला मच गया। यह कैसा न्याय ? वे राज दरबार में पुकार करने गये। सरकार एक धर्मात्मा पुरुष पर इस तरह का कलंक ! हम न्याय चाहते हैं हजारों आवाजें एक साथ आई। सेठ ऐसा नहीं हो सकता यह अन्याय हम कभी बरदाश्त नहीं करेंगे।

महाराज ने अत्यन्त मृदुता के साथ कहा—शान्त हो जाओ प्रजा जन। हमें इसका बहुत दुःख है कि यह साधु धर्मात्मा

आदमी इस तरह के पापाचरण में रत हुआ। हमने इन्हें सब सच बताने के लिये बहुत कुछ कहा किन्तु इन्होंने कुछ भी उत्तर नहीं दिया। हमें मजबूरन यह आज्ञा देनी पड़ी। अब भी अगर ये अपनी सफाई पेश करें तो हम बड़ी खुशी से पुनः विचार कर सकते हैं। आप लोग निश्चय मानिये कि आपका राजा कभी अन्याय नहीं कर सकता। अब भी अगर दूसरे का दोष साबित हो जाय तो हम उसी को दण्ड देंगे। चाहे वह दोषी स्वयं मैं ही क्यों न होऊं।

महाजनों ने सेठ को बहुत समझाया अनुनय विनय की पर व्यर्थ, सेठ की मौन भंग न हुई।

लोगों ने कहा—दुनिया में किसी का विश्वास नहीं करना चाहिये यह दुनिया। बड़ी विचित्र है। भगवन्! तेरी लीला कौन समझ सकता है।

चौक में सेठ लाया गया। प्रजाजन हजारों की संख्या में उस पाखंडी धर्मात्मा की प्राणान्त लीला देखने आये। सब के मुख पर तिरस्कार नृत्य कर रहा था। किन्तु तत्काल यह कैसा परिवर्तन हुआ शूली [illegible] में परिवर्तन होने लगा [illegible]
देखने [illegible]
हा [illegible] धर्मात्मा [illegible]
यह सेठजी पर [illegible]
पर [illegible]

निर्दोष हैं। उन्होंने रानी के कलंक को बचाने के लिये अपने पर विपत्ति ले ली। धन्य है ऐसे त्यागी को।

इसी समय देखा राजा स्वयं उपस्थित होकर कह रहे हैं— सेठजी मुझे दुःख है। इसके लिए मैं बहुत शर्मिन्दा हूं। मुझे आप पर विश्वास था किन्तु आपके मौन रहने के कारण लाचार होकर मुझे यह आज्ञा देनी पड़ी। बोलिये अब आप क्या चाहते हैं ?

सेठ बोले—महाराज यह मेरा ही दोष था। आपने तो न्याय ही किया। अगर आप मुझे कुछ देना ही चाहते हैं तो माता पर किसी तरह का अभियोग उपस्थित न किया जाय।

राजा —यह थी तो शूली पर ही चढ़ाने योग्य किन्तु आपके कथनानुसार क्षमा करता हूं मैं वचनबद्ध हो चुका हूं।

कहते हैं नगर-वासियों ने सेठ की जय जयकार से आकाश गुंजा दिया। अब भी एक ध्वनि वहाँ गुंजती हुई सुनाई देती है। धन्य है सेठ सुदर्शन और धन्य उनका त्याग।

★

चांडाल श्रमण

इसका नाम था हरिकेशी। चाण्डाल कुल का वह बालक आवश्यकता से अधिक नटखट और वाचाल था। गांव से दूर नदी किनारे इस बालक का जन्म एक टूटे फूटे झोंपडे में हुआ था। गरीब मां बाप कैसे दिन गुजारते हैं इसकी चिन्ता करना इसका काम न था। दो समय खाने और रात को सोने के समय ही वह घर को याद करता था। बाकी का समय अपनी मित्र मंडली में बिताता। हां कभी कभी इस समय के सिवाय भी इसे हाजिर होना पड़ता था जब वह किसी लड़के के दो चार झापड़ जड़ देता या किसी का सिर फोड़ देता। पेशी के समय वह इधर उधर की बात बना विपक्षी को झूठा डाल देता और अगर इस पर भी छुटकारा नहीं मिलता तो बड़ी सफाई और फुर्ती से बाप की मार से अपने को बचा लेता। शिकायत करने वाले की तो उस दिन शामत ही आ जाती। घर वाले इसकी शिकायतों से परेशान थे। लड़के इसके कठोर शासन से।

एक दिन वह खेलता खेलता बस्ती से आगे निकल आया जहां धर्म की मोनोपोली ब्राह्मणों ने ले रखी थी। जिस बस्ती में इसकी परछाई भी असह्य थी। जिसके गमन मात्र से वेद पाठ

कुछ पहले, जाम हुआ तक दूषित और कलंकित हो जाती वहीं एक चाण्डाल बालक निर्भीक रूप से वहशत बहमी करे यह कैसे सहन कर सकते थे वे देवता। उन्होंने उसे जानवर की तरह पीटा। इस स्थिति में उसके साथी भी उसे अकेला छोड़ दौड़ गये। फिर भी उसने डट कर मुकाबला किया किन्तु वह निरस्त्र अकेला बालक क्या कर सकता था इन बड़े बड़े सोंटाधारी दानवों के सामने। उसके सिर में बड़ी चोट आई और वह बेहोश होकर गिर पड़ा। इस पर भी उनको सन्तोष न हुआ। उन्होंने उसके बाप से कहा —अगर अपना भला चाहता है तो इस दुष्ट लड़के को अपने झोंपड़े से बाहर निकाल दे। अभी, इसी समय। बेचारा बाप गिड़गिड़ाया जमीन पर नाक रगड़ी और बोला – माई बाप दया करो ऐसी दशा में मैं इसे कहाँ निकालूं? जगह जगह से सिर फूट गया है। ठीक होजाने पर जैसी आज्ञा देंगे कर लूंगा। किन्तु कौन सुनता था उसकी बात। लाचार उसे अपने आदेशदाताओं के आदेश को स्वीकार करना पड़ा उसे टाल कर रहता कहाँ।

पक्षियों का कलरव शान्त होगया। बसेरे के लिए सब अपने अपने घोंसलों में आगए। सूर्य देव अपनी आतप्त किरणों को समेट कर अस्त हो गए। शुभ्र शीतल चाँदनी के साथ चन्द्रोदय हुआ। ठंडी ठंडी हवा बहने लगी। हरिकेश को कुछ कुछ होश आया। उसने बारे बार अपने मूंदे हुए नेत्र

यह शान्ति का मार्ग कतई नहीं। एक बार भले ही तुम स्थूल शरीर को त्याग कर समझ लो कि तुम मुक्त होगए। किन्तु आत्मा कभी नहीं मरती। कर्मों से कहीं नहीं बच सकते। फिर हीन कुल में जन्मने मात्र से कोई हीन नहीं होता। ये श्रेणियाँ तो मनुष्य ने अपनी सुविधा के लिए बना ली हैं। उच्च कुल में जन्म लेने मात्र से ही कोई उच्च नहीं हो जाता न ही इसमें कोई गौरव की ही बात है। यह तो आत्मशुद्धि और अच्छे कर्मों पर आधारित है। आत्म शुद्धि के लिए सब से उत्तम मार्ग साधु जीवन बिताना है।

हरिकेशी ने कहा-महाराज क्या मेरे जैसा आदमी भी इसे ग्रहण कर सकता है ?

साधु ने किसी अदृश्य शक्ति को नमस्कार करके कहा—महाप्रभु के धर्म राज्य में सब को समान स्थान है। वहां व्यक्ति और उसके कुल की पूजा नहीं होती, बल्कि उसके गुण और ज्ञान की पूजा होती है। मुक्ति के द्वार सब के लिए समान रूप से खुले हैं। भगवान ने [illegible] में प्रवचन किया है।

> मे [illegible] अमई [illegible] आ-रोग।
> [illegible] हरी [illegible]
> [illegible] नहीं ?
> [illegible] हरी [illegible] कुने"

[illegible] है

हरिकेशी ने विनय सहित गुरु के आदेश को शिरोधार्य करते हुए कहा-मैं यथाशक्ति गुरुदेव के आदेश का प्रतिपालन करूंगा।

नटखट चांडाल हरिकेशी का हृदय ज्ञान के आलोक में आलोकित हो उठा। उसने ब्राह्मणों के कुलीनतावाद से रौंदे हुए मानव समुदाय की त्रस्त वाणी और करुण क्रंदन को हृदयंगम किया। श्रमण धर्म के साम्यवाद में मानव की मुक्ति का संदेश उसे सुन पड़ा। आत्म साधना के कठोर मार्ग का अवलम्बन करके निर्लिप्त दृष्टि से उसने दो सीमान्तिक विचार धाराओं को तोला और अपने अनुभव को सही पाया। व्यवहार में, जगत में, सर्वत्र उसे अपना निर्णय ही मुक्ति का द्वार प्रतीत हुआ। उसने समाधि त्याग कर अपने विचारों का 'विजयतुर्य इतना' जोर से फूंका कि ब्राह्मण वाद का सिंहासन डोल उठा, यज्ञ कुंड में पशुओं को बलि देने वाले पुरोहितों के हाथ कांपने लगे, कुलीनतावाद के हिमायती ब्राह्मणों के [illegible] नीचे से भूमि खिसकने लगी। ब्राह्मण अहं[illegible] बालक के [illegible] की तुला और [illegible] साम्य-वाद की [illegible] है। आज [illegible] ने [illegible] करने लगा है।

धर्म की रेखा

"आज इतनी सुस्ती से घोड़े को क्यों टहला रहे हो भैया? तुम तो जानते ही हो इसका ऐब। पीछे के घोड़े की टाप सुन लेने पर चलने का तो नाम ही नहीं लेता। चेष्टा करने पर भी इसकी वह बुरी आदत नहीं सुधरी। इसी पर तो मुझे इस पर क्रोध आता है। वर्ना इसकी जोड़ का घोड़ा अपनी नगरी में तो क्या दूर दूर तक नहीं है।" ये शब्द पुरुषवेषधारी वीर राजकुमारी सरस्वती के थे। पीछे वाला घुड़सवार था राजकुमार पावक। ये भाई बहन प्रायः नित्य ही प्रातःकाल नगरी के बाहर दूर घुड़सवारी के लिये जाया करते थे। यद्यपि विधाता के स्त्री ढांचे में सरस्वती का जन्म हुआ और व्याकरणाचार्यों के पोथों में स्त्रलिंग में इसकी गणना होती थी। किन्तु इसको स्त्रीवेश बिल्कुल पसन्द न था [illegible] वह राजकुमार के वेश में ही रहती थी [illegible] हैं [illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

से बाहक कुमार के साथ करता था। राजकुमार की न तो मौन ही भंग हुई और न चाल में ही प्रगति। तब वह हठात् रुक गई। उसने फिर आग्रह के स्वर में पूछा—भैया आखिर इस मौन और चिन्ता का क्या कारण है? और उत्तर की प्रतीक्षा किए बिना ही उसने घोड़े की पीठ ठोक कर एक वृक्ष की टहनी से बांध दिया।

राजकुमार बाहक ने भी राजकुमारी का अनुसरण करते हुए घोड़े की पीठ ठोक कर टहनी से बांधते हुए कहा—घोड़े की जात में एक न एक ऐब रहता ही है। मैंने तो आज तक ऐसा एक भी घोड़ा नहीं देखा जो बिल्कुल निर्दोष हो।

"किन्तु मैं चिन्ता का कारण जानना चाहती हूँ भैया?

"आज मैं यही सोच रहा हूं कि इस तरह स्वच्छन्द विचरना अब अधिक समय तक नहीं हो सकेगा। तुम्हारा जुदाई का मैं कैसे सह सकूंगा [illegible] यह [illegible] का विषय बन रहा है [illegible] करने का [illegible] बोले।

[illegible] क्यों है?

[illegible] राजकन्या को

[illegible] कुछ

[illegible] हुआ हो

राजकुमार ने बीच ही में कहा—तुम अपने लिए न करो तो न सही किन्तु राज्य रक्षा के लिए तो विवाह करना आवश्यक है। कौशल, वैशाली और कौशाम्बी आदि सब की माग कैसे ठुकराई जा सकती है । इनका परिणाम ……

मैं जानती हूं आप चिन्ता न करें । बात टालने की गरज से उसने कहा—देखते हो भैया उधर यह धूल उड़ रही है चलिये देखें क्या मामला है ।

जैसी इच्छा । चलो और दोनों ने लगाम संभाल कर एड़ दी, घोड़े हवा होगये । अभी अधिक दूर जा भी नहीं पाए थे कि नगरवासी मिल गये । पूछने पर मालूम हुआ कि जैन साधुओं का एक दल आया है जो नगरी के बाहर उद्यान में ठहरा हुआ है सब लोग उन्हीं के दर्शनार्थ जा रहे हैं ।

बालक कुमार और कुमारी सरस्वती ने उद्यान में प्रवेश किया। चारों ओर शान्ति का वातावरण धर्म का चर्चा और आत्म-कल्याण की भावना ।

कुमार और कुमारी [illegible] सन्मुख जा बैठे। [illegible] आगे बढ़ा । कुमार ने [illegible] अनुभव किया ।

[illegible] के बाद दिव्या- [illegible] है । आचार्य [illegible] कुमार और कुमारी दो

बिल्कुल अपना दुख भूल भी बैठे। लगभग एक घंटे तक आचार्य श्री की वाणी से अमृतधारा प्रवाहित होती रही।

राजकुमार बालक और राजकुमारी सरस्वती को आचार्य श्री के दर्शन से एक अपूर्व शान्ति मिली। उनके प्रखर तेज, मृदु और हृदयस्पर्शी वाणी ने उनका सारा शोक मिटा दिया। उनके उपदेश ने जहां उन्हें शान्ति प्रदान की वहां एक नई हलचल भी मचा दी। उनके हृदय में वैराग्य का उदय हो गया। उन्होंने अपनी इच्छा गुरुदेव को बताई। आचार्य ने दीक्षित करने की स्वीकृति दे दी। वहां से विदा लेकर वे वापिस राजमहल में आये। उस समय उनकी मुखाकृति देखते ही बनती थी, चेहरे पर संतोष और अंग अंग से प्रसन्नता टपक रही थी। भूले पथिक को मार्ग मिलने पर जितनी प्रसन्नता होती है उससे कहीं अधिक कुमार और कुमारी को हो रही थी। आज उन्हें पता चला कि जीवन का ध्येय केवल भोग मात्र और उदरपोषण ही नहीं है। उन्हें वही मार्ग अपनी आत्मोन्नति के लिए श्रेष्ठ जँचा।

डरते डरते उन्होंने महाराज तथा महारानी से अपनी इच्छा प्रगट की।

महाराज तथा महारानी तो सुन रह गये। उन्होंने बड़े दुःख के साथ कहा बेटा! तुम यह क्या कर रहे हो? यह अवस्था वैरागी बनने की नहीं। अभी तो तुम्हारी [illegible] समय के सुख भोगने की है। तुम्हारे और [illegible]

तुम समझते हो उतना सरल नहीं। पग पग पर प्रकृति से लड़ाई। नहीं नहीं कुमार हमें बुढ़ापे में इस तरह दुखी न करो। किन्तु दोनों अडिग रहे। उन्होंने कहा—

> 'जरा जाव न पीडेइ, वाही जाव न वड्ढइ।
> जाविंदिया न हायंति, ताव धम्मं समायरे।'

कुछ समय बाद अपनी योग्यता से लघु बालक कुमार गण नायक बना दिये गये। राजकुमारी सरस्वती भी साध्वियों के बीच में रहने लगी। यद्यपि उनके क्षेत्र अलग अलग हो गये किन्तु यह सोच कर उन्हें सन्तोष था कि दोनों का आदर्श एक है, उद्देश्य एक है। दोनों एक ही लक्ष्य की तरफ बढ़ रहे हैं उन्होंने जिस मार्ग का अनुसरण किया उसमें अपने को एक दम डुबो दिया।

एक लम्बे समय के बाद कथानक भाई बहन उज्जयिनी में आचार्य और साध्वी के रूप में मिले। एक दिन महासाध्वी सरस्वती अपनी साध्वियों के साथ आचार्य जी के दर्शनार्थ आ रही थी कि इसी नगरी के महाराज गर्दभिल्ल ने साध्वियों को देखा और देखते ही साध्वी सरस्वती पर मोहित होगए। यह सुन्दरी तो मेरे महल में रहने योग्य है। इस तरह का कष्ट-मय जीवन बिताने के लिए इसका जीवन नहीं बना। उसने तुरन्त अपने अनुचरों को आज्ञा दी – मेरे महलों में पहुंचने के पहले यह सुन्दरी [illegible]

बीच ही में महाराज ने गुस्से के साथ कहा—जानता हूं साध्वी है। किन्तु इस सुन्दरी का कष्ट मुझ से नहीं देखा जाता। तुम्हारा कर्त्तव्य सोचना नहीं, आज्ञा पालन करना है। जाओ।

कुछ देर बाद लोगों ने बीच चौराहे पर साध्वी सरस्वती को महाराज के रथ पर उनके अनुचरों द्वारा ले जाते हुए देखा। नगरवासी कांप उठे। इतना वीभत्स दृश्य उन्होंने कभी नहीं देखा था। उनकी बुद्धि को जैसे लकवा मार गया। किसी की भी हिम्मत प्रतिकार करने की न हुई। वे मिट्टी के पुतलों की तरह निर्जीव से हो गए। इस तरह नगरवासियों के देखते देखते साध्वी निर्विघ्न महलों में पहुंचा दी गई। द्रौपदी के चीरहरण के समय भीष्म पितामह, कर्ण आदि महाशूरवीर जिस तरह बहरे और गूंगे बन गये थे वही हाल उज्जयिनी के नगर वासियों का था।

कालकाचार्य ने जब यह समाचार सुना तो दंग रह गए। उन का शरीर क्रोध से कांप उठा। आंखों से ज्वाला निकलने लगी उनका सोया हुआ क्षात्रत्व जाग उठा। दोनों भुजाएं फड़कने लगीं। क्या सब नगरवासी पुरुषत्वहीन हो गए। इस तरह का अन्याय खड़े खड़े कैसे सहते। यह उनकी बहन का अपमान नहीं किन्तु समस्त साध्वी संघ का अपमान है। वे इसे कभी सहन नहीं कर सकते। किन्तु प्रथम राजा को समझाना उन्होंने उचित समझा। इसी समय उन्होंने राजमहल की तरफ प्रस्थान किया। लोगों के आचरण से वह [illegible] नहीं थे। उन्हें

कल्पना में भी यह ख्याल नहीं था कि अहिंसा का प्रतीक एक जैन आचार्य भी समय पर इतना उग्र रूप धारण कर सकता है। उन्होंने इसे मर्यादा के बाहर जाते समझा। किन्तु किसी की हिम्मत उन्हें रोकने की न हुई।

आचार्य ने राजा को बड़ी शांति के साथ समझाते हुए कहा राजन्! यह आपका धर्म नहीं। आप इस नगरी के स्वामी हैं, पिता हैं। आपका धर्म प्रजा का आदर्श है। जब आप स्वयं न्याय का गला घोंटने लगेंगे तो दूसरे की तो बात ही क्या। आप रक्षक हैं जब आप ही भक्षक बन जायेंगे तो रक्षा कौन करेगा? आपने एक क्षत्राणी का दूध पिया है। आप को यह दुराचार शोभा नहीं देता। आपने एक साध्वी का अपहरण किया जो सांसारिक सुखों को ठुकरा कर निकल गई। आप से मेरी नम्र प्रार्थना है कि आप साध्वी को छोड़ दें।

राजा गर्दभिल्ल ने ठहाका लगाते हुए कहा—मुझे नीति पढ़ाने की आवश्यकता नहीं आचार्य! मैं अपनी नीति से अपरिचित नहीं हूं। अब आप जा सकते हैं।

आचार्य ने कहा—अगर आप अपनी नीति से परिचित होते तो [illegible] यहाँ [illegible] एक साध्वी का अपहरण करके [illegible] की बात करते हैं। मैं [illegible] बार बार कहता [illegible] धारा [illegible] का नाश

अनिवार्य हो जायगा ।

राजा ने हँसते हुए कहा – यह और भी अच्छी बात है कि वह एक राजकुमारी है । यहाँ पर उसे वे ही सुख मिलेंगे जैसे उस सरीखी अप्सरा को मिलने चाहिये ।

आचार्य ने क्रोध को दबाकर कहा—मुझे आपकी बुद्धि पर तरस आता है और क्रोध भी ।

राजा ने व्यंग से कहा—तो शस्त्र मंगवाऊं ?

आचार्य ने कहा–एक समय था जब मुझे भी इन पर आस्था थी । क्षत्री के लिए अस्त्र शस्त्र मंगवाने की आवश्यकता नहीं होती । आज भी ये हाथ युद्ध कर सकते हैं किन्तु मेरा मुनि धर्म मुझे रोकता है, जहाँ तक शांति से काम हो सके मैं इस व्रत को त्याग कर शस्त्र उठाना नहीं चाहता । मैं नहीं चाहता कि व्यर्थ में निरपराधों का संहार हो मेरा कर्तव्य मुझे बारबार यह कहने को बाध्य करता है कि आप उस महासाध्वी को मुक्त कर दें । अन्यथा मैं यह दिखा दूंगा कि एक जैन आचार्य अन्याय के विपरीत शस्त्र उठाने में भी नहीं हिचकता है । वह जरूरत पड़ने पर धर्म के लिए शस्त्र भी उठा सकता है ।

राजा ने हँसते हुए कहा—अब आप जा सकते हैं साधु लोग आप की बाट देख रहे होंगे । वरना कहीं मेरे अनुचर आपका स्वागत न कर बैठें ।

आचार्य—यह मैं जानता हूं कि सामान्य पुरुष तो कुछ भी

नजर नहीं आता। अपने पैरों आप कुल्हाड़ी मारते भी वह नहीं हिचकता। विवेक नाम की वस्तु से वह किनारा कर जाता है। मैं आपसे फिर प्रार्थना करता हूं कि विवेक से काम लें आपको यह शोभा नहीं देता। आपको अविलम्ब साध्वी को सादर पहुंचा देना चाहिये। अन्यथा इसका परिणाम ……

राजा ने गुस्से में पैर पटक कर कहा—और मैं भी अन्तिम बार कहता हूं कि आप अपना रास्ता लीजिये।

आचार्य ने भी और वहां ठहरना उचित नहीं समझा और वे भविष्य के परिणामों को सोचते सोचते चले गये।

× × × ×

किसी भी प्रकार जब राजा गर्दभिल्ल उस महासाध्वी को वश करने में सफल नहीं हुए तब उन्होंने तरह तरह के असह्य कष्ट देने शुरू किए किन्तु साध्वी तो चट्टान की तरह अटल थी। उसका धैर्य अपूर्व था। नये नये कष्टों से उसकी आत्मा और निखर उठी। ऐसी जिन्दगी से वह मौत अच्छी समझती थी।

कुछ समय बाद आचार्य को उज्जयिनी की रणभूमि में देखा। आचार्य के युद्ध कौशल से गर्दभिल्ल की सेना के छक्के छूट गये। उसका [illegible] [illegible] पहला तथा नागरिकों के ढेर ही ढेर [illegible] [illegible] [illegible] आचार्य की सेना ने विजय [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] गर्दभिल्ल बन्दी [illegible]

उठो मुनि अरणिक! इस तरह विलाप करना तुम्हें शोभा नहीं
देता। आज तुम्हारे मुनि पिता को स्वर्गस्थ हुए पूरे तीन दिन
हो गए, किन्तु अभी तक तुमने कुछ भी नहीं खाया, खाते कहां
से तीन दिनों से तो यहीं पड़े हो. भिक्षा लेने तो जाना ही होगा।
इतना मोह तुम्हें शोभा नहीं देता। तुम जितेन्द्रिय कहलाते हो
यह विचार आते ही वह तत्त्वत नगर की तरफ चल पड़ा। नगर
में पहुंचते पहुंचते मध्याह्न का समय हो गया। देह पसीने से
तर हो गई। इस कड़ी धूप मे चलने के कारण पैरों में फफोले
उभर आए, सारे पैर धूल से भर गए। कंठ सूखने लगा कोठों
र कठाई जम गई अब एक कदम भी आगे उनसे न चला गया
र लड़खड़ाने लगे। सामने ही एक विशाल भवन दिखाई
या। युवा मुनि ने इसी भवन के नीचे विश्राम करना ठीक
मझा। उनको बड़ी जोर से प्यास लग रही थी किन्तु कुछ देर
म करके ही भिक्षा के लिए जाना ठीक समझा। नाना
रों में उलझे मुनि संसार की विरूपताओं पर सोच ही रहे
एक सुन्दरी युवती ने आकर कहा—प्रभो! मेरा नमस्कार
र हो।

पैर दबाने का आग्रह किया।

मुनि ने कहा—नहीं देवि! हमें तुम्हारी सेवा की आवश्यकता नहीं। हम अपना कार्य गृहस्थ से नहीं करवाते। फिर स्त्री स्पर्श तो हम साधुओं के लिए बिल्कुल वर्जित है।

मनचली युवती ने मचलते हुए कहा—तो ऐसा वेश छोड़ो साधु। यह बड़े बूढ़ों का वेश तुम्हें शोभा नहीं देता है। इस तरह यह जवानी व्यर्थ में गंवाने के लिए नहीं। तुम्हारा कोमल शरीर क्या इस लायक है? देखो पैरों में छाले हो गए हैं, जगह जगह से रुधिर बह रहा है। अब इस ढोंग को मैं और अधिक बर्दाश्त नहीं कर सकती। चलिए अन्दर, महल के अन्दर चलिये। यह दासी आपकी हर सेवा करने को अपना अहोभाग्य समझेगी।

युवा मुनि का सर चकराने लगा। यह क्या वे कहाँ फस गए। उनकी आंखों में लाली दौड़ आई और मुह क्रोध से तमतमा उठा। उन्होंने कहा—बस करो हम साधु हैं ब्रह्मचारी हैं। हमारे लिए इस तरह सुनना भी पाप है। मैंने तुम्हें एक सती स्त्री समझा था।

रमणी ने साधु की बात पर ध्यान न देते हुए ढीठ स्वर में सहास्य कहा—अन्दर पधारिये कुमार और कुमार कुछ बोले इससे पहले ही उनका हाथ अपनी नाजुक अंगुलियों से पकड़ कर अन्दर ले गई। अब साधु में इतनी शक्ति कहां रही कि उसका प्रतिकार करते। [illegible] प्रेम का स्रोत फूट पड़ा। उनकी

पैर दबाने का आग्रह किया ।

मुनि ने कहा—नहीं देवि ! हमें तुम्हारी सेवा की आवश्यकता नहीं । हम अपना कार्य गृहस्थ से नहीं करवाते । फिर स्त्री स्पर्श तो हम साधुओं के लिए बिल्कुल वर्जित है ।

मनचली युवती ने मचलते हुए कहा—तो ऐसा वेश छोड़ो साधु । यह बड़े बूढ़ों का वेश तुम्हें शोभा नहीं देता है । इस तरह यह जवानी व्यर्थ में गंवाने के लिए नहीं । तुम्हारा कोमल शरीर क्या इस लायक है ? देखो पैरों में छाले हो गए हैं, जगह जगह से रुधिर बह रहा है । अब इस ढोंग को मैं और अधिक बर्दाश्त नहीं कर सकती । चलिए अन्दर महल के अन्दर चलिये । यह दासी आपकी हर सेवा करने को अपना सौभाग्य समझेगी ।

युवा मुनि का सर चकराने लगा । यह क्या वे कहाँ फंस गए । उनकी आंखों में लाली दौड़ आई और महाक्रोध से तमतमा उठा । उन्होंने कहा—बस करो हम साधु हैं ब्रह्मचारी हैं । हमारे लिए इस तरह सुनना भी पाप है । मैंने तुम्हें एक सती स्त्री समझा था ।

[illegible] में
[illegible] बोले
[illegible] से वह
[illegible] उसका
[illegible] उनकी

कर क्या करोगे बेटा, ऐसा एक स्थान भी नहीं जहाँ यह बुढ़िया नहीं पहुँची किन्तु दुर्भाग्य उसका अभी तक पता नहीं चला। न जाने वह कहाँ और किस अवस्था में होगा कहते कहते बुढ़िया रो पड़ी।

अरणिक ने सहानुभूति पूर्ण स्वर में कहा—किन्तु बताने में तो कुछ हर्ज नहीं सम्भव है मैं आपकी कुछ मदद कर सकूं।

बुढ़िया ने कहा—हाँ तुम ठीक कहते हो बेटा शायद तुम्हारे ही सयोग से मिल जाय। एक दिन उसने वीर प्रभु की वाणी सुनी और उसे वैराग्य हो गया। हमने कितना समझाया किन्तु वह न माना और उसने दीक्षा ले ली। बाद में मैंने और उसके पिता ने भी उसी मार्ग का अनुसरण किया। उसके पिता का स्वर्गवास होगया किन्तु मैंने जब अन्य साधुओं से सुना कि उसका कहीं पता नहीं चला तो बेटा मेरा हृदय नहीं माना मैं साधुपन को छोड़ कर उसे ढूंढती फिरती हूँ किन्तु उसका अभी तक कहीं भी पता न चला।

यह कथा तो मेरे जीवन से बिल्कुल मिलती जुलती है। उसका नाम क्या था अत्यन्त उत्सुकता से अरणिक ने पूछा।

उसका नाम अरणिक था बेटा बुढ़िया ने अरणिक को गौर से देखते हुए कहा।

अरणिक ने मां मां कहते हुए बुढ़िया के चरण पकड़ लिए और बताया—मां मैं ही तुम्हारा वह [illegible] और [illegible]

मां मुझे दंड दो। मैंने तुम्हें बहुत दुखी किया है।

अरणिक की बूढ़ी मां आनन्द के सागर में डूब कर बेसुध हो गई। होश आने पर उसने मुसकराते हुए कहा—अवश्य इसका दंड मैं तुम्हें दूंगी और मैं भी लूंगी। चलो आओ मेरे साथ। अरणिक एक बालक की तरह मां के साथ हो गया।

सुन्दरी देखती ही रह गई उसने पुकारते हुए कहा—कुमार! जाते कहाँ हो ?

कहीं मुझे जाना चाहिए देवि! मैंने भी तुम्हारे प्रति अपराध किया है उसका प्रायश्चित करने। मेरे जाने में ही हम दोनों का कल्याण है।

कुछ दिनों बाद लोगों ने सुना कि अरणिक की मां ने अरणिक को एक बार पुनः साधुत्व स्वीकार करने के लिए कहा और उसने भी सहर्ष माता की आज्ञा का शिरोधार्य किया। कालान्तर में वह एक महान तपस्वी के रूप में संसार में विख्यात हुआ।

*

वे तो अब इस संसार में नहीं हैं गुरुदेव ।

क्या मेरा बन्धु अब इस संसार में नहीं रहा कहते कहते आचार्य के उज्ज्वल और गंभीर चेहरे पर शोक की कालिमा छा गई। पिताजी तो हमें अनाथ करके चले गये । माताजी ने मुझे आपकी सेवा में भेजा है ।

यह उनकी मेरे प्रति कृपा है । तुम इस आश्रम को अपना घर समझो वत्स ! अभी तुम थके हुए होओगे जाकर विश्राम करो। बाद में मैं तुम्हारे अध्ययन की व्यवस्था कर दूंगा ।

× × × ×

'बेटा ! ये हैं तुम्हारी आचार्याणी', और यह है मेरे बालबंधु काश्यप का पुत्र कपिल । अब यह यहीं रह कर विद्याध्ययन करेगा।' एक दूसरे का परिचय कराते हुए आचार्य ने कहा ।

आचार्याणी—किन्तु आपको तो मालूम ही है कि घर में ...

हां ठीक है मैं कुछ प्रबन्ध कर दूंगा आचार्य ने बीच ही में उत्तर दिया ।

आचार्य विचार में पड़ गए । ईश्वर ने कहीं अपार विद्या बुद्धि दी । सम्मान भी खूब दिया किन्तु दिया नहीं तो सिर्फ पैसा । वे दुरूह से दुरूह समस्याओं का समाधान चुटकियों में कर सकते थे । बड़े बड़े प्रश्न हल कर सकते थे । गृहस्थी के नोन तेल लकड़ी का प्रश्न सदैव से एक महान जटिल प्रश्न था । इस प्रश्न

उसे अपनी सफाई देने के लिए कहा गया। उसने संक्षेप में अपनी सारी कहानी सुना दी। सुन कर राजा को बड़ी दया आई। उन्होंने कहा— ब्राह्मण! तुम जो कुछ मांगना चाहते हो, मांग लो।

कपिल का हृदय खुशी से नाच उठा। राजा ने अनुग्रह किया है तो फिर क्या मांगू? कुछ सोच कर ही मांगना चाहिए। वह बोला— यदि महाराज की आज्ञा हो तो सोच कर मांगूंगा।

राजा मुस्कराए उन्होंने कहा—इधर वाटिका में बैठ कर सोच लो पर अधिक समय न लगाना।

तो फिर राजा से क्या मांगूं दो मासे सोना जिसके लिए घर से चला था किन्तु नहीं इतने से क्या होगा दो ही दिन में फिर वही दरिद्रता। जीर्ण शीर्ण हो गए हैं उसकी प्रिया के वस्त्र। अंग पर एक भी आभूषण नहीं। इतना मांगू जिससे यह सब हो जाय तो सौ मुद्रा मांग लूं पर इससे क्या होगा गहने कपड़े बन जायेंगे पर मकान आदि तो फिर हजार मुद्रा मांग लूं घर भी बन जायगा गहने कपड़े भी बन जायेंगे किन्तु फिर उसके लिए पालकी भी तो चाहिए सेवा के लिए सेवका भी चाहिए और फिर इतनी मुद्रा खर्ची भी कितने दिन फिर वही हाल हो जायगा। मांगने में इतनी कंजूसी क्यों करूं? महाराज प्रसन्न हुए हैं इनके यहां क्या कमी है तो फिर लाख करोड़ मांग लूं नहीं राज्य ही क्यों न मांग लूं [illegible] उसे उधर किसी ने जोर से तमाचा लगाया।

सत्यव्रती

सूर्य अस्ताचल की ओर तीव्र गति से बढ़ा चला जा रहा था। अपने दुश्मन को रण छोड़ कर जाते देख अमावस्या ने एक बड़े ज़ोर के अट्टहास के साथ विजय दुदुंभि बजा दी। उसकी काली काली रश्मियां पृथ्वी के चहुँ ओर फैल गईं। भयंकर गर्जन के साथ मेघमालाएं घुमड़ने लगीं। इस अंधकारमय समय में एक अपूर्व सुन्दरी उस निर्जन वन की ओर बढ़ रही थी। जिस मार्ग से जाते हुए अच्छे अच्छे वीरों के भी दिल दहल जाय। सुन्दरी का ध्यान प्रकृति की भयंकरता की तरफ नहीं था। वह तो पग पग पर अपनी चाल को और तेज करती हुई बढ़ी चली जा रही थी। उसके कंधे पर एक सुकुमार बालक का मृत शरीर पड़ा था। उसके नयनों से आँसुओं की बाढ़ उमड़ पड़ी थी। उसके अस्फुट ओठों से अत्यन्त करुणाजनक स्वर में निकल रहा था—बेटा रोहित' बेटा रोहित [illegible] तुम्हारी मां कितना विकल हो रहा है [illegible] देखो। [illegible] एक बार [illegible] मां को [illegible] नहीं [illegible] सुकुमार मां का कष्ट [illegible]

[illegible] माया का इतना

भी [illegible] मुझसे नहीं देखा गया। ओह! क्योंकि तुमने क्यों पुकार दी? क्या भाई तुम्हें श्मशानिकी में नहीं करना था। मुझे और कुछ नहीं चाहिये मेरा लाल मुझे लौटा दो। उसके हृदय विदारक करुण चीत्कार से सारे वन के पशु पक्षी और पत्थर तक कांप उठे किन्तु नहीं [illegible] को पुकार में पता था। [illegible] जैसे यह तो दूर पार के वन में फल चुना था उसका नाम वन पुष्प था। उसमें से विशाल भयंकर काले सांप ने उसे काट खा लिया था। जितना साहसी था वह मां की क्षुधा शांत करने के लिए अपनी जान की बाजी लगा कर वृक्ष पर चढ़ जाता था। किन्तु दुष्ट सांप को दया कहाँ उसने तो अपना आघात कर ही दिया उस मासूम बच्चे पर। इसीलिए उसकी दुखिया मां इतनी भयंकर रात्रि में भी अपने मालिक का काम निपटा कर अपने बेटे का दाह संस्कार करने चली। दासी को इतना अधिकार भी कहाँ कि वह काम के समय पर अपने जिगर का दाह संस्कार भी कर सके। उसे अब किसी का डर नहीं था किसी कि बाधक [illegible] नहीं [illegible] इससे [illegible] भयंकर विपत्ति उसके लिए और [illegible] की [illegible] कल्पना भी अकिंचन [illegible] सोने का [illegible] तरसती हुई [illegible] काल ने उसके [illegible] दी [illegible] है।

इस निर्जन स्थान में [illegible] आशा भरी दृष्टि [illegible] लिये

कुछ भी दिखाई नहीं दिया । शनैः शनैः उसका धैर्य छूटने लगा कि उसे अर्द्धदग्ध चिता के प्रकाश में एक विशालकाय मनुष्य दिखाई दिया । शरीर पर एक धोती और हाथ में एक लट्ठ । उसकी छाती धड़कने लगी । उसके सारे शरीर को जैसे लकवा मार गया । वह जहाँ की तहाँ स्तम्भ की तरह खड़ी की खड़ी रह गई ।

लट्ठधारी पुरुष ने जब इस भयंकर रात्रि में एक स्त्री को देखा तो उसके आश्चर्य का ठिकाना न रहा । उसने पास आकर कहा इस भयंकर अंधेरी रात में कहाँ जा रही हो बनदेवि ? क्या तुम्हें भय नहीं लगता । यह बालक कौन है ? इसे कहां ले जा रही हो ?

उत्तर में उस करुणा की मूर्ति ने रुद्धकंठ से अति ही क्षीण स्वर में कहा—तुम कौन हो मुझे पूछने वाले ? मुझ अभागिनी का सहायक भी मुझ से रुष्ट है वह भी मेरी सुध नहीं लेता फिर तुम तो उसी निर्दय जाति के ।

उस बलिष्ठ पुरुष ने उसकी बात का ख्याल न करते हुए सहानुभूतिपूर्ण स्वर में कहा—तुम्हारे कहने से पता चलता है कि तुम किसी क्रूर द्वारा सताई गई हो । अगर तुम्हें कुछ आपत्ति न हो तो बताओ तुम कौन हो ? तुम्हें क्या तकलीफ है ? शायद मैं तुम्हारे कुछ काम आ सकूं ।

भद्र ! तुम बड़े भले और दयालु मालूम देते हो । मैं बहुत

निर्मम में फंसी हुई हूं। मेरे एक मात्र पुत्र को सांप ने का[ट]
लिया। कृपा करके तुम इसका विष उतार दो। जन्म भर [illegible]
मैं तुम्हारा यह एहसान न भूलूंगी यही मेरा एक सहारा [है]
आंसुओं से भीगती हुई सुन्दरी बोली।

युवक को सब समझते देर नहीं लगी। उसने बालक के कोम[ल]
हाथ की नाड़ी टटोली। हृदय की धड़कन देखी। एक निराश
भरी लहरी निश्वास छोड़ते हुए उसने कहा—देवि! इसका मोह छो[ड़]
दो। विष अपना असर कर चुका। अब कुछ नहीं हो सकता
अब इसमें कुछ भी शेष नहीं। कभी का यह काल का शिका[र]
बन चुका। रात बहुत हो चुकी मुन्किन है कहीं पानी न बरस[ने]
लगे। जितनी जल्दी हो सके इसका दाह संस्कार कर दो
बेचारा सुकुमार बालक कच्ची उम्र में ही उठ गया। राजकुमा[र]
सा मुंह है इसका। पर काल के आगे किसी का वश नहीं
यहीं पर आकर मनुष्य की हिम्मत टूट जाती है सहानुभूति पू[र्ण]
स्वर में युवक बोला।

ऐसा न कहिये। इन का विष उतार दीजिये। यह जल्द
अच्छा हो सकता [illegible] ।

युवक ने [illegible] कहा—देवि अब [illegible]
[illegible] में [illegible]

[illegible]

आप ही इसका दाह संस्कार कर दीजिये । सचमुच आप बड़े दयालु हैं । अपने को संयत करते हुए स्त्री ने कहा ।

इसमें दया की क्या बात है मेरा तो यह काम ही है । श्मशान कर निकालो ! मैं अभी दाह संस्कार कर देता हूँ । हाथ फैलाते हुए पुरुष ने कहा ।

श्मशान कर ! मेरे पास तो कुछ भी नहीं है चुकाने को घबराहट के साथ उसने कहा ।

अरे ! तुम नहीं जानती यहाँ पर यह नियम है कि दाह संस्कार में जो लकड़ी लगती है उसके लिए कर देना पड़ता है ।

किन्तु मेरे पास तो कुछ भी नहीं । पैसा होता तो बि-[illegible] कफन के मेरा बेटा रहता । मुझ पर दया करो ।

तब तो मैं बिल्कुल असमर्थ हूं देवि ! अपने मालिक की आज्ञा का उल्लंघन नहीं कर सकता । पर क्या तुम्हारे कोई भी नहीं । पति, भाई, पिता क्या–किन्तु तुम्हारी मांग तो भरी हुई है । क्या वह इतना निष्ठुर है ।

ऐसा न कहो ऐसा न कहो । सब कुछ था सब कुछ है किन्तु पर तुम क्या मुझ पर इतनी भी दया भी नहीं कर सकते । पैसे का नाम सुनते ही दया कहां भाग [illegible] है तुम्हारा कुछ [illegible] होते हुए स्त्री ने कहा ।

देवि तुम दुःखी है [illegible] मैं तुम्हारी

महारानी बोली—यह कैसे संभव है। भला महाराज से पहले मैं कैसे चुन सकती हूं। मैं इस लायक भी तो नहीं। मेरा अहोभाग्य महाराज ने मुझे यह सम्मान दिया।

महाराज समझ गये असलियत क्या है। महारानी भी हमारी ही तरह कुछ निर्णय नहीं कर सकी। महाराज ने कुमारी मल्लि की तरफ नक्शे बढ़ाते हुए कहा—हम यह भार अपनी पुत्री को देते हैं यह पसन्द करे इसमें से एक सब से सुन्दर नमूना।

राजकुमारी ने सहर्ष उन नक्शों को लेते हुए कहा—महाराज की आज्ञा शिरोधार्य। इस असीम कृपा के लिए मैं अपने को धन्य समझती हूँ। मल्लि ने भी सब नक्शे एक के बाद एक बड़ी गंभीरता से देखे सब नक्शे एक से एक कलापूर्ण। राजकुमारी ने कहा-महाराज की आज्ञा हो तो अपनी राय जाहिर करूं।

महाराज ने कहा—अवश्य। हम तो बहुत उत्सुक हैं अपनी राजकुमारी की राय सुनने के लिए।

राजकुमारी ने कहा—महाराज शिल्पियों के नक्शे एक से एक भव्य और कलापूर्ण हैं। बहुत अच्छा 'एक' निर्णय पर पहुँच पाना कठिन है [illegible] नमूना बनाए।

[illegible]

कैसे कर सकूंगा। अपने को संभालते हुए हरिश्चन्द्र बोले।

'कर' दूं। क्या अब भी तुम्हें मेरा विश्वास नहीं। मेरे पास क्या है कि मैं तुम्हें कर दूं। क्या अब भी तुम्हें कर चाहिये, क्या तुम इसके सिवा नहीं? तुम्हारा कुछ भी कर्तव्य नहीं कहते कहते तारा के आंसुओं का वेग फिर बढ़ गया।

क्या मैं इसे कर बिना लिए जला दूं। किन्तु नहीं यह नहीं हो सकता। मैंने अपने मालिक को जो वचन दिया है उसे रखना ही होगा। मैं एक बिका हुआ दास हूँ मेरे पास मेरा कहने को कुछ भी नहीं। नहीं नहीं मुझसे यह नहीं होगा। रानी रानी! मैं बिना कर लिये कुछ नहीं कर सकता। मैं मजबूर हूं कहते कहते उसका गला भर आया।

कर्तव्य तुम्हारे मालिक की आज्ञा। तुम्हारा अपने पुत्र के प्रति कुछ भी कर्तव्य नहीं यह मैं क्या सुन रही हू मेरे कान बहरे क्यों नहीं हो जाते धरती क्यों नहीं फट जाती। हे भगवन्! क्या यही दिन देखने के लिए मुझे जिन्दा रखा था। हो तो तुम आखिर पुरुष जाति के हो ना। क्या टके के अभाव में मैं अपने राजा बेटे का जला भी न सकूंगी। हां एक बात है क्या मैं अपना सा डी का आधा हिस्सा देकर तुम्हारा कर चुका सकती हूं?

पुरुष हरिश्चन्द्र को ऐसा लगा मानो किसी ने उस पर एक जोर का तमाचा मारा है। ... स्वर में फिर बोले—तुम धन्य

है तारा तुमने मुझे बचा लिया अब मैं अपना कर्तव्य निभा सकूँगा ।

धन्य है ! वह अभी सुन्दरी झाड़ी पार भी नहीं पाई थी कि देखा सामने से पुष्प वृष्टि के साथ भारत के सत्यधारी कर्तव्यनिष्ठ राजा हरिश्चन्द्र तारा और रोहित की जयजयकार के नारे लग रहे हैं । कितना सुन्दर और मनोहर था वह दृश्य । कष्टों के अथाह सागर को पार करके सत्य की कसौटी में खरे उतरे थे । इस महापुरुष की सत्यपरायणता आज भी लोगों के हृदय में गूँज रही है । आज भी सती शिरोमणि तारा की कष्ट सहिष्णुता पढ़ कर हृदय एक बारगी दहल उठता है । धन्य है देवि ! तुम्हें । भारत माँ की लाज—तुम्हारी जैसी वीरांगना पर आज भी भारत के बच्चे बच्चे को नाज है । आज भी नाममात्र से छाती गर्व से फूल उठती है [illegible] तुम्हारी कीर्ति प्रकाश प्रदान कर रही है—[illegible] हैं [illegible] हैं [illegible] [illegible] रहते हैं

मदद नहीं कर सकता। मैं कोरी सहानुभूति दिखाने वाला ही नहीं किन्तु क्या करूं बिका हुआ दास हूँ, गुलाम हूँ। मेरा भी मुझ पर अधिकार नहीं। देवी! मुझे क्षमा करो। दया के नाम पर कर्तव्य का बलिदान नहीं कर सकता। अपने उत्तरदायित्व से विमुख नहीं हो सकता। बिना कर लिये मैं तुम्हारे इस बालक का संस्कार न कर सकूंगा। अच्छा तो चलूं। मालिक के काम में कुछ हर्ज न हो।

क्या कहा, बिके हुए दास कहीं आप ही ?

कौन, तारा मेरी तारा ! क्या मेरा यह मेरा ही राजा बेटा ? कैसे क्या हुआ इस बालक को तारा के कंधे से लेते हुए हरिश्चन्द्र बोले।

हां नाथ ! आपका राजा बेटा ही आज हमें इस तरह दुखी करके बिलखता छोड़ गया। लड़कों के साथ वन में गया था वहीं पर सर्प ने काट लिया।

हे रे विधाता क्या तुमसे हमारा यह सुख भी नहीं देखा गया? राज्य ऐश्वर्य का हमें गम नहीं किन्तु हमारे जीवन को हमसे क्यों छीन लिया? इसके बदले हमें ही क्यों न उठा लिया। इसको भोला भाला ......।

नाथ ! अब विलाप करने से क्या लाभ ? जल्दी से दाह संस्कार करके ......।

तुम ठीक कहती हो रानी, किन्तु बिना कर के दाह संस्कार

हैं। शिल्पी! अब यह भार तुम्हारे पर रहा। अपनी कला का प्रदर्शन करो। हम एक बहुत सुन्दर चीज की तुमसे आशा करते हैं जिस तरह की दूर दूर तक कहीं नजर नहीं आए।

शिल्पी ने सिर झुका कर कहा—महाराज की आज्ञा शिरोधार्य है ईश्वर ने चाहा तो ऐसा ही होगा।

शिल्पी की साधना सफल हुई। एक भव्य इक मंजिला महल बन कर तैयार हो गया। जिसके चारों तरफ एक सुन्दर उद्यान लगाया गया था। महल के अन्दर की कारीगरी देखते ही बनती थी। महाराज को सूचना मिली—महल बन कर तैयार हो गया। महाराज महारानी तथा राजकुमारी मल्लि सहित प्रसिद्ध शिल्पी की अनुपम कारीगरी देखने आए। देखते देखते महाराज एक कमरे में पहुंचे देखा—राजकुमारी एक रत्न जड़ित सिंहासन पर बैठी है। महाराज महल की कारीगरी में इतने खो गए कि उन्हें भान ही नहीं रहा कि राजकुमारी उन्हीं के पीछे है। उन्होंने सोचा कि राजकुमारी थक गई अत: विश्राम के लिए बैठ गई। महाराज ने कहा—राजकुमारी थक गई तो चलो शेष फिर देखेंगे।

राजकुमारी बोली—मैं तो नहीं थकी महाराज। अगर महाराज की इच्छा नहीं तो पधारें।

महाराज चाक [illegible] में आई। उन्होंने मुड़ कर देखा [illegible] महारानी के साथ खड़ी है। हैं! [illegible] तरफ [illegible] खड़ा है [illegible] है। सचमुच इसने मुझे छका

[illegible]

अनावरण

रामपुरी का प्रसिद्ध शिल्पी मिथिला के राज दरबार में उपस्थित हुआ। उसने अपनी उत्कृष्ट कला के भव्य से भव्य नमूनों के नक्शे पेश किये। महाराज कुंभ अपनी अनुपम सुन्दरी रानी प्रभावती तथा राजकुमारी मल्लि के साथ विराजमान थे। सरदार, उमराव अपने अपने स्थान पर यथोचित बैठे थे। महाराज को समस्त नमूने एक से एक सुन्दर दिखाई दिये। वे स्वयं इस बात का कुछ भी निर्णय नहीं कर सके कि सर्व प्रथम किस नमूने की इमारत बनवाई जाय। उन्होंने वे नक्शे महारानी को देते हुए कहा—महारानी अपनी पसन्द बताएं।

महारानी प्रभावती ने एक एक बार नक्शे देखे किन्तु एक भी तो ऐसा नहीं जिसे बाद दिया जाय। हर एक नमूने में एक नई अद्भुत विशेषता मिलती। महारानी ने नक्शे महाराज को देते हुए कहा—महाराज ही बताएं उन्हें कौन सा नक्शा अधिक पसन्द आया है।

महाराज मुस्कराए उन्होंने कहा—हमने तो अपनी पसन्द का निर्णय कर ही लिया है किन्तु हम पहले अपनी महारानी की पसन्द जानना चाहते हैं।

चाहती हूं किन्तु फिर भी महाराज से निवेदन है कि जिस प्रकार समय समय पर महाराज ने मेरी राय मान कर मुझे गौरव प्रदान किया है । क्या महाराज मेरी यह आखिरी बात नहीं रखेंगे ? और आखिर राजकुमारी ने स्वीकृति प्राप्त कर सब राजाओं के पास अलग अलग दूत भेज कर कहला दिया कि राजकुमारी ने आपको याद फरमाया है ।

यह संवाद सुन कर राजा लोग बहुत प्रसन्न हुए । वे सभी सजधज के साथ प्रसन्नमन राजकुमारी महल से मिलने गये एक बड़ी आशा लेकर ।

राजकुमारी ने पहले से ही इनके लिए वह महल निश्चित कर दिया जिसमें उसकी मूर्ति थी ।

सब ने एक दूसरे को देखा और देखा राजकुमारी को । दिल में एक अद्भुत हलचल मच गई । सुना उससे कहीं अधिक सुन्दर । सब एक टक उसको देखने लगे । सेविकाओं ने बैठने का अनुरोध किया, सब लोग बैठ गए । सब के मन में एक प्रश्न था । क्या हमारा अपमान करने के लिए ही हमें यहां बुलाया है [illegible] राजकुमारी ने [illegible] करना [illegible] रहा । बैठने [illegible] नहीं [illegible] राजकुमारी के अपूर्व [illegible] सब आने जाने [illegible] पास आकर [illegible] हम यहां

ही पथ के पथिक बन कर ज्ञान का अलख जगा दें।

राजकुमारी मल्लि की विवेक पूर्ण वक्तव्यता का असर सब प
पड़ा। वे बोले—राजकुमारी! आपको धन्य है। हम सब स
आपके पीछे हैं। आपने हम सब को सच्चा मार्ग दिखाया। अ
हम भी अपना जीवन समर्पण करते हैं। राजकुमारी एक म
तपस्विनी के वेश में एक बहुत बड़े दल का नेतृत्व करती
देश के कोने कोने में ज्ञान का प्रचार करने लगी। आगे चल
इस महान् सती ने जैनियों के उन्नीसवें तीर्थङ्कर का महान
प्राप्त किया, जो कि राजकुमारी के लिए एक गौरव की ब
थी। इन्होंने अपने जीवन काल में हजारों ही नहीं लाखों मनु
को प्रतिबोध देकर उनको सही मार्ग पर लगाया। भारत की
वीर रमणी ने तीर्थङ्कर का पद प्राप्त कर दुनिया के सामन
महान आदर्श उपस्थित किया। भारत के हर कोने में आज
इस देवी की घर घर में पूजा होती है।

*